रांची, 18 नवंबर 2018

समवेत

नोबा का वार्षिक आयोजन

- एच केपी सिन्हा
- शोभा पांडेय
- मित्रेश्वर
- पारिजात सिन्हा
- प्रदीप कुमार
- डॉ केके नाग
- शंभू प्रसाद सिन्हा
- सच्चिदानंद सिंह
- डॉ अमर वर्मा
- रामचंद्र चौधरी
- आनंद मूर्ति
- सुनीता नारायण
- डॉ राजेंद्र के झा
- फहमीदा रियाज
- सुनील चंद्र

झारखण्ड सरकार

बदलता झारखण्ड

विकास की ओर उन्मुख झारखण्ड...

181 24X7

मुख्यमंत्री जनसंवाद केन्द्र

जनसहभागिता के साथ सुदृढ़ एवं पारदर्शी प्रशासन, भ्रष्टाचार पर अंकुश व जन शिकायतों के निवारण की दिशा में अनूठी पहल...

शिकायत व सुझाव दर्ज कराने के माध्यम

- 181 — टॉल फ्री नंबर
- — वेबसाइट
- पोस्ट
- फेसबुक / ट्विटर
- — मुख्यमंत्री / राज्यपाल सचिवालय या उपायुक्त कार्यालय

पता: मुख्यमंत्री जनसंवाद केंद्र, सूचना भवन, मेयर्स रोड, रांची, झारखण्ड, पिन- 834008

cmjansamvad.jharkhand.gov.in @Jharkhand181 @jharkhand181

वन्दे! वन्दे हे सुन्दर मम सखा नेतरहाट सदा,
वन्दे हे सुन्दर मम सखा नेतरहाट।
धन्य महा प्रांगण यह, विंध्य प्रकृति क्रीड़ा का;
वन में वन पयाओं का, विवरण स्वच्छन्द यहां;
विहगों से कंठ मिला, गाते नव गान सदा,
वन्दे, वन्दे हे...।

ऊषा के साथ जगे, प्रतिदिन मंगलमय हो;
कार्य पूर्ण प्रतिफल हो, ज्ञान वृद्धि जनहित हो;
अंतरतर का मधुमय, गायें संगीत सदा,
वन्दे, वन्दे...।

तन मन जन प्राण मिला, नव युग से नव गति ले;
संग पवन मेघ गगन, संग सूर्य चांद संग;
तारे ग्रह चरण, चलते नव चाल सदा...।
वन्दे, वन्दे हे...।

साधक हैं समता के, सत्य न्याय करूणा के;
हिन्द प्रेम संबल है, विश्व प्रेम साध्य बना;
जन-जन में ज्योति जगे, सत चित आनन्द सदा...।
वन्दे, वन्दे हे...।

पायें वरदान कि हों, अंकुर तरु में परिणत;
रस ले फल-फूलों से, स्वस्थ बने मानवता;
'शिव' हो कल्याण सखा, गूंजे जयकार सदा...।
वन्दे, वन्दे हे...।

Hail! Hail! Netarhat
You are our great school
We like you most
we love you
Sun shines on you
rain pours on you
As if comes god's grace
For giving us solace
And how are we inspired
By the singing of the bird
By the ringing sound coming
from the grazing herd
Our hands want to work
Our legs want to climb
We learn to live together
We love to live together
You have infused our culture
In our minds and heart together
We are prepared to die together
For our mother country dear
Hail! Hail! Netarhat

विरासत

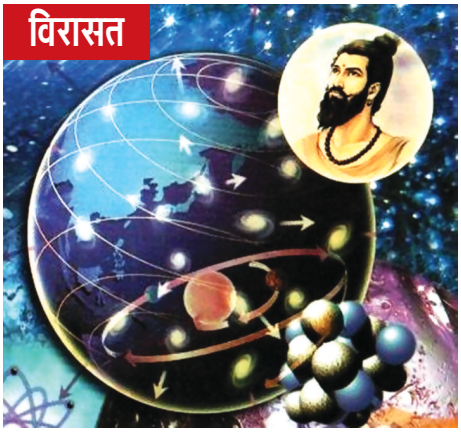

पौराणिक कथाओं और प्राचीन दर्शन की प्रासंगिकता

पेज 20 >

भारतीय समाज का यह हिस्सा दरअसल इस उपहास के जरिये अपनी मानसिक संकीर्णता को उजागर करता है 'वह यह भूल जाता है कि पौराणिक कथाएं और मिथक दरअसल प्राचीन समाज की जीवन्तता को प्रदिशत करते हैं

पेज 05 >नोबा बंधुओं से आग्रह

यदि आपको कभी भी ऐसा देखने या सुनने का मौका मिलता है, कि विद्यालय में कोई कमी या गिरावट आ रही है, अथवा जो होना चाहिए वह नहीं हो रहा है, तो आप सर्वप्रथम कार्यकारिणी समिति के सभापति/सदस्यों से संपर्क कर उन्हें अपनी देखी-सुनी बताएं।

सामता की वादियों में नाग-नेवले की भिड़ंत

पेज 46 >

सामता के वनों के इस रणभूमि में अब रणचंडी का आवाहन हो चुका था। दोनों रणबाकुंरेअब मरने-मारने पर उतारू थे। दावं पर दावं, पैतरें पर पैतरें लग रहे थे। कभी वह साक्षात् काल स्वरूप भुजंग भारी पड़ता तो कभी वह तेज फूर्तीला नेवला।

अस्तित्व का संघर्ष

प्रसंगवश

जैसे लोग वैसे बोल

पेज 16 >

जो लब आजाद हैं वे बोल रहे हैं, जैसे लब आजाद हैं वैसा ही बोल रहे है। दंभ बोलता है, थैली बोलती है, कुर्सी बोलती है, अहंकार बोलता है बाकी सब देखते सुनते हैं । इसलिए पंडित मानते हैं कि - जैसे लोग, वैसे बोल।

पेज 35 > लैंगिक समानता और हमारी संस्कृति

'नेतरहाट विद्यालय के कार्यकाल के दौरान सम्मान तो मिला, परंतु मुझे कई कार्यकलापों से वंचित रखा गया। जैसे टेंडर समिति में न रखा जाना, या अन्य किसी महत्वपूर्ण समिति में न रखा जाना ।'

विज्ञान कथा

टीइ-2

पेज 28 >

यह लाहौर था, 1830-35 का लाहौर; महाराजा रणजीत सिंह जिंदा था। तुम्हे उन लोगों ने मुंबई की कोई चकला चलाने वाली समझा जो पंजाबी कुड़ियों को भगा ले जाने के लिए आई थी।

पेज 38 > मेरी शोध यात्रा और मेरा विद्यालय

आने वाले समय में टीकाकरण कार्यक्रम एक वृहद रूप ले लेगा, लोगों में स्वीकार्यता भी बढ़ेगी, अगर कुछ गलतियों को हम अनावश्यक महत्व देंगे तो यह कार्यक्रम असामयिक मृत्यु को प्राप्त कर लेगा।

प्रवाह

सँवरते मकान बिखरते परिवार

पेज 10 >

पुत्र- पुत्री, माता-पिता, बहन-बहनोई, भाई-भाभी, दादा-दादी, नाना- नानी, चाचा-चाची, बुआ- फूफा, ननद-ननदोई, साली- सलहज जैसे ढेर सारे रिश्ते बने, मगर ठीक उसी रोज मानवता एक झटके में पराई हो गई।

पेज 44 > कैसे करें गांधी को पुनर्जीवित

गांधी पुराने नहीं पड़े हैं, हम उनके विचारों को व्यवहार में बदलने की क्षमता खो चुके हैं। यही कारण है कि गांधी आज भी प्रासंगिक हैं। पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों ही पर्यावरण के खतरों का समाधान ढूंढने में विफल रहे हैं।

समवेत
नोबा का वार्षिक आयोजन

संपादक : डॉ. विजय भास्कर

अध्यक्ष- प्रो.अशोक कुमार चौधरी- '65
उपाध्यक्ष- अरविन्द कुमार -'66
सचिव- सुनील चन्द्र -'86
कोषाध्यक्ष- अनुजीत ऋतुराज- '79
संयुक्त सचिव- आशीष आलोक -'94
पूर्व अध्यक्ष - प्रयाग दुबे -'60
पूर्व सचिव- शोभित मेहता- '79

सदस्य- सच्चिदा नन्द ठाकुर '60, डॉ अम्बिका दत्त शर्मा '63, श्रीमन्न नारायण तिवारी '71, रूमा चटर्जी '74, शुभू राज उपाध्याय '87, प्रिय रंजन '87, रमा निवास '88, नवीन कुमार '93, रविकान्त 2003, अभिषेक अमित 2008

प्रकाशक: नेतरहाट पूर्ववर्ती छात्र संगठन रांची

आवरण, अवधारणा, ले आउट : विजय भास्कर

समवेत © निःशुल्क और निजी वितरण के लिए है इसमें उपयोग की गयी सामग्री/सामग्रियां/चित्र पूर्व सूचना के बाद साभार उपयोग की जा सकती हैं। इन सामग्रियों पर नोबा रांची का © है।

मुद्रण : आइ.डी.पब्लिकेशंस, कोकर, रांची

संपर्क : email-nobaranchi@gmail.com

नोबा बंधुओं से आग्रह

डॉ कृष्ण कुमार नाग

प्रथम बैच (1954-60) के मेरे मित्र, जो 10 -12 आयु-वर्ग में नेतरहाट आए थे, आज क्रमशः 74 या 76 वर्ष को पार कर चुके हैं। इसी तरह हमारे आदरणीय श्रीमानजी, जो संभवतः न्यूनतम 25 वर्ष की आयु के रहे होंगे 1954 में, वे भी अब 89 वर्ष पार कर चुके हैं। इन सबने अनेक संस्थानों में शिक्षा ग्रहण/कार्य किया होगा। उन्हीं की तरह, हम लोगों के बाद, जो भी यहां से पढ़े, या यहां पढ़ा चुके हों, उन सभी का सर्वोपरि अपनापन, नेतरहाट विद्यालय के प्रति 'ममत्व' रहा है। ऐसा क्यों है? सभी को एहसास होता है कि 'नेतरहाट' मेरा घर, मेरा परिवार है, और जो कुछ मैं आज हूं उसमें मेरे इस घर-परिवार का बहुत अधिक योगदान है, मैं इनका ऋणी हूं। मेरी उत्कट अभिलाषा हमेशा रहती है कि मेरा यह घर-परिवार निरंतर समृद्धि की ओर अग्रसित हो, मेरे अनुज हर क्षेत्र में हमेशा आगे बढ़ते रहें, यशस्वी हों। विद्यालय के गौरव में स्वंय अपने गौरव का आभास होता है, ठीक वैसा ही, जैसा अपने घर-परिवार के अनुजों के शिखर प्राप्त करने पर होता है। श्रीमानजी-माताजी लोगों ने जिस लगन, निष्ठा और अपनापन से हम लोगों को रखा, शिक्षा दी; मित्रों ने जैसी मदद की, वही अपनापन हैं जो हमें एक-दूसरे से मिलने-जुलने में सुख का अहसास कराते रहते हैं।

इस विद्यालय में मेरे सहपाठी रहे मित्र, गुरुवृंद रहे श्रीमानजी लोगों में, आज के दिन भी, नेतरहाट को और अच्छा से अच्छा बनाते जाने के प्रयत्नों के लिए इतनी ऊर्जा देख, विस्मयकारी सीख मिलती रहती है।

इस भावना को सदा अक्षुण्ण बनाये रखना तबतक संभव होता रहेगा जबतक विद्यालय के हमारे वर्तमान प्राचार्य, श्रीमान जी, माता जी और कर्मचारी बंधु, छात्र-छात्राओं को वैसा ही स्नेह, वैसा ही आत्मीयता से शिक्षित करते रहेंगे। वे पूर्णतः अपना ही बेटा-बेटी (डेस्कॉलर बेटी) मानकर, अनुशासित गुरुकुल पद्धति को आधुनिकतम टेक्नोलॉजी से जोड़ते हुए, शिक्षित करते रहें, अच्छे इंसान बनाते रहें। और हमारे बालकगण 'अत्त दीपा विहरथ' को सार्थक करने में सदा प्रयत्नशील रहें। सभी पूर्ववर्ती छात्रों/छात्राओं (नोबा बंधु), पूर्ववर्ती शिक्षक, माताएं व कर्मचारी बंधुओं के मन में यह अभिलाषा अक्सर परिलक्षित होती रहती है कि हमारा विद्यालय दिनानुदिन प्रगति के पथ पर अग्रसर होता ही रहे। यहां से शिक्षित बच्चे जीवन के हर क्षेत्र में, अपनी रुचि के अनुसार, अपने चरित्र, अपनी निष्ठा, ईमानदारी और कार्यकुशलता से सर्वोच्च शिखर पर पहुंचते रहें, ताकि वे समाज में अनुकरणीय, उदाहरणीय व्यक्ति माने जाते रहें। कहीं, कोई राह से भटक न जाये, कोई ऐसा कार्य न कर बैठे जिससे मन दुखी और निराश हो जाए, विद्यालय की प्रतिष्ठा पर आंच आ जाए।

यदि आपको कभी भी ऐसा देखने या सुनने का मौका मिलता है, कि विद्यालय में कोई कमी या गिरावट आ रही है, अथवा जो होना चाहिए वह नहीं हो रहा है, तो आप सर्वप्रथम कार्यकारिणी समिति के सभापति/सदस्यों से संपर्क कर उन्हें अपनी देखी-सुनी बताएं। आधी अधूरी या असत्य जानकारी को सार्वजनिक या 'वायरल' करने से विद्यालय का और हम सबका क्या लाभ होगा? उल्टे तकलीफें बढ़ेंगी।

इस उदेश्य की प्राप्ति में हमारी अर्थात, विशेषकर पूर्ववर्ती छात्र/छात्राओं की क्या भूमिका होनी चाहिए और किस योगदान की आशा की जानी चाहिए? नेतरहाट विद्यालय समिति के संस्थापकों ने तो नेतरहाट विद्यालय के पूर्ववर्ती छात्रों तथा पूर्व शिक्षकों/प्राचार्यों पर दिल खोलकर विश्वास और भरोसा किया और नियमावली ही ऐसी बना दी कि सामान्य निकाय एवं कार्यकारिणी समिति में ये बहुतायत में होंगे। इतना ही नहीं, कार्यकारिणी समिति के सभापति का पद किसी पूर्ववर्ती छात्र के लिए ही आरक्षित तक कर दिया !

मेरी समझ से, पूर्व के सामान्य निकाय एवं कार्यकारिणी

समिति के सभी सदस्यों और अध्यक्षों ने अपनी पूरी लगन, ईमानदारी और निष्ठा से अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया है। इसके लिए उन सभी की जितनी भी प्रशंसा की जाये, कम ही होगी।

पर विद्यालय को दिनानुदिन प्रगति कराने वाले, कोई और नहीं, विद्यालय के प्राचार्य, शिक्षक, माताएं और कर्मचारी बंधु और वहां अध्ययन करने वाले छात्र/छात्राएं ही हैं और रहेंगे। नेतरहाट विद्यालय समिति के सदस्य उन्हें उचित व्यवस्था, मार्गदर्शन और सुविधाएं समय के साथ देते रहें और प्रोत्साहित करते रहें, तो परिणाम अवश्य सुखद होते रहेंगे। नोबा बंधु यह जानकर प्रसन्न होंगे कि झारखंड राज्य का वर्ष 2017 का सर्वोत्तम विद्यालय हमारे विद्यालय को घोषित किया गया। और 2018 की

मैट्रिकुलेशन परीक्षा का परिणाम भी बहुत अच्छा रहा : प्रथम श्रेणी में मेरिट में प्रथम व द्वितीय स्थान के साथ-साथ कई बच्चों ने मेरिट में वर्षों बाद, अपना स्थान बनाया।

नेतरहाट विद्यालय की कार्यकारिणी समिति ने पहली बार प्रवेश परीक्षा 2017-18 में संचालित की जिसमें पहली बार पूरी सीट, अर्थात 100 बच्चों ने विद्यालय में नामांकन लिया और अपनी पढ़ाई कर रहे हैं। इनकी प्रवेश परीक्षा के समय विद्यालय के कई पूर्व शिक्षकों तथा कई नोबा मित्रों का अपार सहयोग मिला- हम धन्य हुए ! वर्ष 2018-19 की प्रवेश परीक्षा में भी उनका निःस्वार्थ सहयोग समिति को मिला। विद्यालय के प्राचार्य, शिक्षक, प्रशिक्षक व कर्मचारी बंधुओं ने पूरी लगन और निष्ठा से परीक्षा का संचालन कर उसे सफल बनाया, कहीं से किसी प्रकार की अनियमितता की शिकायत नहीं मिली।

कभी एक समय था, जब नेतरहाट की प्रवेश परीक्षा में हजारों-हजार परीक्षार्थी शामिल होते थे। जिस घर, गांव या इष्ट-कुटुंब का बालक परीक्षा में सफल होकर नामांकन ले लेता था, बातें फैल जाया करती थीं कि उसका भविष्य उज्जवल होना ही है। पर काल-क्रम में बहुत से अन्य अच्छे स्कूल भी खुलते गए, अंग्रेजी माध्यम का वर्चस्व बढ़ता गया। कई कारण होते गए, सरकारी बनाम प्राइवेट-पब्लिक स्कूल की व्यवस्था-संचालन की गिरावट-बढ़ोतरी के। उसी क्रम में सरकारी तंत्र में उच्च-पदस्थ कुछ नेतरहाट के पूर्ववर्ती दूरदर्शी छात्रों के अदम्य साहस का ही यह परिणाम हुआ कि नेतरहाट विद्यालय को झारखंड सरकार ने एक स्वायतशासी समिति के सुपुर्द कर दिया। स्पष्टतः चूंकि इस स्वायतशासी समिति में पूर्ववर्ती छात्र व पूर्ववर्ती शिक्षक-प्राचार्य मुख्य भूमिका में हैं, सभी नोबा बंधुओं का उत्तरदायित्व बढ़ गया है, कि हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए।

समाज में मान्यताएं भी, थोड़ी बहुत, समय के साथ बदलती रहती हैं। हां, कुछ शाश्वत मानव मूल्य अवश्य हैं, जो बदलने चाहिए भी नहीं। ज्ञानी ऐसा जानते और समझते हैं। नोबा बन्धु ज्ञानी और समझदार हैं, और उनके 99 प्रतिशत से आधिक लोगों से सामान्य निकाय और कार्यकारिणी समिति के सदस्यों को कोई शिकायत नहीं होती, और यदा-कदा ही नहीं, हमेशा से सहयोग भी मिलता रहता रहा है विद्यालय के किसी भी कार्यक्रम में। ऐसा नहीं है कि शेष 1 प्रतिशत से कम नोबा बन्धु के मन में नेतरहाट विद्यालय के प्रति ममत्व और अपनत्व में किसी अन्य की तुलना में कोई कमी है। बल्कि, मुझे तो ऐसा आभास हुआ है कि उनके मन में कुछ ज्यादा ही है। हां, कुछ अति-उत्साह है; और साथ ही धीरज की थोड़ी कमी भी । और उन्हें संभवतः लगता है कि उनकी बातों को समिति के लोग, तुरंत उचित महत्व नहीं दे रहे। इसी क्रम में कभी-कभी बेबुनियाद बातें भी प्राचार्य, शिक्षक या छात्रों के बारे में आधुनिक संचार माध्यम में फैल जाती हैं। इससे विद्यालय के प्राचार्य, शिक्षक और छात्रों के बारे में सकारात्मक आलोचना की जगह हतोत्साही, नकारात्मक आलोचना आने लगती है। मैं आग्रह करना चहता हूं नोबा बन्धुओं से कि यदि आपको कभी भी ऐसा देखने या सुनने का मौका मिलता है, कि विद्यालय में कोई कमी या गिरावट आ रही है, अथवा जो होना चाहिए वह नहीं हो रहा है, तो आप सर्वप्रथम कार्यकारिणी समिति के सभापति/सदस्यों से संपर्क कर उन्हें अपनी देखी-सुनी बताएं। आधी अधूरी या असत्य जानकारी को सार्वजनिक या 'वायरल' करने से विद्यालय का और हम सबका क्या लाभ होगा? उल्टे तकलीफें बढ़ेंगी।

नेतरहाट विद्यालय में आज के दिन भी शिक्षक के रूप में

नोबा के एक सदस्य कार्यरत हैं, उन्हें भी यदा-कदा ऐसी 'वायरल' की जाने वाली बातों से काफी कष्ट है। कार्यकारिणी समिति के सभापति का पद तो आप ही लोगों के बीच का है। आप अपने कार्यक्षेत्र में सर्वोच्च शिखर पर पहुंचें, झारखंड की सरकार आप ही में से किन्हीं को सम्मानसहित यह उत्तरदायित्व देगी, ताकि विद्यालय को आपके अनुभवों से आगे प्रगतिपथ पर बढ़ने में सहायता मिल सके।

मेरी एक इच्छा यह है कि नोबा के द्वारा विद्यालय में एक कार्पस फंड स्थापित हो, जिससे वर्तमान और पूर्ववर्ती छात्रों/शिक्षकों के कल्याण के लिए कार्य भी किए जा सकें। पूर्ववर्ती छात्रों की उच्च-शिक्षा, पठन-पाठन या स्वास्थ्य-संबन्धी कतिपय समस्याओं के निदान निकाले जा सकें। इसके लिए समिति की नियमावली में कुछ संशोधन की आवश्यकता है। संयोग से, मैं ही उस संशोधन समिति का संप्रति अध्यक्ष हूं।

विद्यालय में वर्तमान नियमावली के अनुसार किसी से भी दान प्राप्त किया जा सकता है, पर दान से प्राप्त उस धन का उपयोग दाता की इच्छानुसार नहीं किया जा सकता, क्योकि वह संप्रति विद्यालय के सामान्य कोश का ही, एक अंश हो जाता है। अतः आवश्यकता है कि इसमें संशोधन किया जाए।

आप सबकी जानकारी के लिए मैं नियमावली की वर्तमान स्थिति और उसमें वांछित संशोधन (यदि आप कुछ सुझाव देना चाहते हों तो अवश्य मेरे ई-मेल **(kknag.2010@rediffmail.com)** पर भेजें । नियमावली और उसमें आवश्यक संशोधन मैं नीचे प्रस्तुत कर रहा हूं

''(छ) वर्तमान स्थिति

''सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं, उपक्रमों, दातव्यों एवं व्यक्तियों, पूर्व छात्रों इत्यादि से दातव्य, दान, अनुदान, उपहार प्राप्त एवं उपभोग करने की प्रक्रिया, शर्तें, अधिकारों इत्यादि का निर्धारण।''

(छ) प्रस्तावित आंशिक संशोधन

''सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं, उपक्रमों दातव्यों एवं व्यक्तियों ('पूर्व छात्रों' शब्दों का विलोपन प्रस्वावित) इत्यादि से दातव्य, दान, अनुदान, उपहार प्राप्त एवं उपभोग करने की प्रक्रिया, शर्तें, अधिकारों इत्यादि का निर्धारण।''

(छ) के बाद व (ज) के पूर्व प्रतिस्थापन व आंशिक संशोधन

(ज) "पूर्ववर्ती छात्रों से दातव्य, दान, अनुदान, उपहार प्राप्त एवं उपभोग करने की प्रक्रिया, शर्तें, अधिकारों इत्यादि के निर्धारण के लिए पूर्ववर्ती छात्र संगठन नोबा के विभिन्न शहरों के अध्यक्षों, सचिवों से आधुनिक संचार माध्यमों द्वारा आपसी परामर्शों और बहुमत सहमति के उपरांत नोबा कार्पस फंड की स्थापना, जिससे विद्यालय के वर्तमान और पूर्ववर्ती छात्रों इत्यादि के कल्याण और उन्नति के निमित्त हर तरह के आवश्यक कार्य इत्यादि करने का निर्धारण। नोबा कार्पस फंड के आय-व्यय को उक्त उद्देश्यों के अनुरूप संचालित करने के निमित्त एक समिति का गठन जिसमें (क) नोबा रांची, पटना और दिल्ली के अध्यक्ष में से एक (ख) कार्यकारिणी समिति द्वारा नामित एक सदस्य तथा (ग) विद्यालय के प्राचार्य द्वारा आय-व्यय की संपूर्ण जबावदेही दी जा सके। फंड के खाते का संचालन तीनों में से किन्हीं दो के हस्ताक्षर से किये जाने का सभापति, कार्यकारिणी समिति के अभिप्रमाणित किए जाने पर वर्तमान (ज) को (झ) से प्रतिरोपित किया जाय।

मैं नहीं जानता कि कब यह संशोधन हो सकेगा, कयोंकि संशोधन राज्य सरकार की कैबिनेट से पारित होने के बाद ही गजट में छपने पर होता है, और इसमें कुछ विलंब तो होगा ही। किन्तु आप जानते हैं कि स्थापना दिवस पर या अन्य दिनों भी, पूर्ववर्ती छात्र सपरिवार नेतरहाट जाने को इच्छुक रहते हैं, विद्यालय को उन्हें आमंत्रित कर खुशी भी होती है। किन्तु वर्तमान में अतिथि आवास इतने नहीं हैं कि सभी को यथोचित व्यवस्था मिल सके। मेरी इच्छा है कि नियमावली में संशोधन के पश्चात एक अच्छा और बड़ा अतिथि आवास नोबा कार्पस फंड के ब्याज से बन पाये। इसी प्रकार अन्य कल्याणकारी योजनाएं बनाने के बारे में आप में से किन्हीं का कोई भी प्रस्ताव, मैं सहर्ष आमंत्रित कर रहा हूं।

रांची नोबा के सदस्यों को मैं इस संभावना से भी अवगत कराना चाहता हूं कि भविष्य में भी कार्यकारिणी समिति के सदस्यों तथा सभापति के चयन में उनको प्राथमिकता मिल सकती है, चूंकि ये पद अवैतनिक हैं, तथा रांची से नेतरहाट आना-जाना अन्य जगहों की तुलना में आसान व कम खर्चीला है। वर्तमान और भविष्य में भी कब, कौन सी आकस्मिक स्थिति विद्यालय में उत्पन्न हो और तुरंत जाना पड़े इन सदस्यों को, कहना अनिश्चित है। अतः रांची नोबा का विद्यालय की समिति को लेकर अबतक जिस प्रकार का सकारात्मक रुख रहा है, आगे भी उसकी सदा अपेक्षा रहेगी। आपसे मेरा विनम्र अनुरोध है कि कृपया इस बात पर अपने विचार दें, चर्चा करें कि नेतरहाट विद्यालय के वर्तमान और पूर्ववर्ती छात्रों के कल्याण के लिए नोबा की क्या योजना हो। क्या-क्या किए जाने चाहिए और क्या पद्धति हो, पैसों के सदुपयोग करने के, जिनसे दान करने वालों को भी अच्छा लगता रहे। आप निःसंकोच अपने विचार भेज सकते हैं, मैं आभारी रहूंगा।

रांची विवि के पूर्व कुलपति डा (प्रो) के के नाग प्रथम बैच (1954-'60) के छात्र हैं। इस समय विद्यालय का संचालन करने वाले स्वायतशसी संस्थान, नेतरहाट विद्यालय समिति (नेविस) के अध्यक्ष हैं।

Estd. 1971

International Cricket Stadium Contractor

CIN-U45200BR2003PTC10375

As ISO 90001:2008 & 14001:2004 Company

Ram Kripal Singh Construction Pvt. Ltd.

Head Office

702, 7th Floor, Panchwati Plaza, Kutchery Road, Ranchi - 834001 (Jharkhand)

Phone No. : +91-651-2207091, 2207083 Fax No. : +91-651-2207084 E-mail : rkscpl_org@rediffmail.com

Registered Office

Shri Krishna Nagar, Deepshikha Road, Begusarai-851101, Bihar

Website : www.rkscpl.com

UNDER RANCHI JURISDICTION

मेरे मन के अनुत्तरित प्रश्न

आनंद मूर्ति

इस साल के अंत तक मेरे नेतरहाट स्कूली जीवन के लगभग 6 दशक गुजर जाएंगे। समय की रेत पर स्मृतियां धुंधली हो गई हैं, पर आपसी संबंधों का, जीवन का एक रूप जेहन में बार-बार उभरता है। उस खोए हुए समय की तलाश करने लगता हूं, जब सब कुछ मधुर, शांत और प्रेरणादायक रहा । उस गुजरे हुए समय को फिर पाने की आकांक्षा रहती है । पर परिवर्तन अनिवार्य है। जो कल था, वह अब नहीं और जो आज है वह भी नहीं रहेगा।

पर उस बीते समय के निशान मेरे मन, चेतना और अस्तित्व पर पड़ चुके हैं। अपने छोटे शहर में शिक्षा की डगर पर कदम बढ़े थे कि एक मोड़ आया, सुखद मोड़- नेतरहाट स्कूल प्रवेश का मोड़ पथ। प्रवेश परीक्षा की कोई अग्रिम सूचना नहीं, तैयारी नहीं थी। प्रवेश परीक्षा का एक प्रश्न याद आता है *दूध का जला मट्ठा फूंक फूंक कर पीता है- भावार्थ ?* उम्र के हिसाब से कठिन प्रश्न। उस समय हृदय की धड़कन सामान्य थी। स्कूल प्रवेश निमंत्रण मिला तो धड़कन अवश्य बढ़ गयी।

पीछे मुड़कर स्कूली जीवन की ओर देखता हूं तो पाता हूं - शिक्षा, खेल और अनुशासन का अद्भुत समन्वय। सहपाठियों में न राग न द्वेष। शिक्षकों और छात्रों का एक ही उद्देश्य। स्मृति शेष है कुछ दोस्तों की, कुछ घटनाओं की। सत्यदेव प्रसाद कुशाग्र बुद्धि के, 6 पंक्तियों में टेढ़ी- मेढ़ी लिखावट से पूरा एक पृष्ठ भर देते थे । मैं 20 पंक्तियां लिखता। साफ लिखावट में । पर अंक कम मिलते। और हमारी प्रतिद्वंद्विता बढ़ जाती। रामजी प्रसाद हास्य सम्राट। हास्य प्रतियोगिताओं में अव्वल आते । सांस्कृतिक कार्यक्रमों के भी सूत्रधार । त्रिनाथ मिश्र की वेश भूषा-जब शारीरिक अनुपात तीव्रता से बढ़ा तो हाफ पैंट सिर्फ अधखुले बेल्ट पर टिका रहता। विदूषक की भंगिमा में नजर आते। उमाशंकर को मधुशाला कंठस्थ। सुनाने की तीव्र उत्कंठा तो श्रीमान मिथिलेश कांति जी का प्रोत्साहन भी। अजीब समां बंधता। वीरेंद्र कुमार मधुकर उपनाम से कविता पाठ रंगमंच पर करते तो उनके कवि हृदय का परिचय मिलता । अभी भी ओशो सिद्धार्थ के रूप में उनकी वाणी मुखर है। कनिष्ठ मित्रों की याद आती है। अरूप मुखर्जी की, जिससे मैंने अंडा खाने की ट्रेनिंग पायी। संतोष छौछरिया दुबले -पतले, शांत, पर उनके विराट हृदय का परिचय बाद के मिलन में पाता रहा। नोबा प्लॉट उन्हीं की सहृदयता, प्रयास की देन के रूप में देखता हूं। श्री मिथिलेश कांति जी के निदेशन में एक पृष्ठ की वाल पत्रिका आलेखन की शुरुआत हुई। कलाधर (क वर्ग), खग (ख वर्ग) गवाक्ष (ग वर्ग)। सबों की कविता, संवाद, लेख रहते । मेरे वर्ग के कलाधर में लेख, मेरी राइटिंग में होता। कुछ कार्टून, कुछ संबोधन मेरे भी होते। यह परंपरा अनोखी थी। पश्चात यह क्रम चला या नहीं मैं नहीं जान पाया। शिक्षकों में श्री विश्वम्भर दत्त पांडय के अधिक निकट रहा। श्री राधा सिन्हा की देख-रेख में प्रेम में था। प्रेम के बाद तक्षशिला में उन्हीं की छांव में पला। मेरी गलतियों पर क्षमा करते तो मुझे सीख मिल जाती। मेरी कप्तानी में विकास विद्यालय के साथ फुटबाल प्रतियोगिता में जीत मिली तो टीम को पांच रुपये का पारितोषिक मिला। पांच रुपये की खायी गयी टॉफी अनमोल स्वाद की रही। स्कूली शिक्षा के बाद अपनी काबिलियत अपना सहारा आप। कोई मार्ग दर्शन नहीं। नेतरहाट ही प्रकाश देता रहा।

संत जेवियर कॉलेज (1960) में हम तीन थे रवीन्द्र कुमार, लक्ष्मी नारायण सिंह और मैं स्वयं। रॉल काल के समय सभी के जवाब होता यस फादर। हम तीन अपना-अपना काल आने पर कहते -यस सर। सबों की नजरें घूम जातीं।

कॅरियर संघर्ष की अलग कहानी है। पर उसूल नही बदले। स्कूल कॉलेज छूटा पर मित्रों से संपर्क रहा। लारेंस केरकेट्टा, सत्यदेव प्रसाद, रामनाथ सिंह, कृष्ण कुमार नाग, नरेंद्र भगत, वीरेंद्र कुमार, संतोष छौछरिया से अधिक भेंट होती रही। कुछ मित्र छूटे तो रांची प्रवास में अधिक मित्र मिल गये। उनकी प्रेरणादायक यादगारें फिर कभी।

नोबा मिलन एक मंच है, अधिक से अधिक मुलाकातों का। नोबा गठन का श्रेय पूर्व प्राचार्य श्री वीरेंद्र कुमार सिन्हा जी को है जो स्कूल जीवन के पटाक्षेप काल में हुआ। नोबा मिलन में सम्मिलित होता रहा हूं। इस संदर्भ में एक स्मृति है। नोबा मिलन के दौरान सत्यदेव प्रसाद से चर्चा हुई। क्या किसी गंभीर-सार्थक मुद्दे पर बात हुई ? उत्तर मिला, सोचो मत खाओ पियो और मौज कर निकल जाओ। पर मैं संतुष्ट नहीं हुआ। मेरे मन में कुछ प्रश्न हैं जो अनुत्तरित रह जाते हैं। गंभीर और सार्थक। जीवन संघर्ष और कॅरियर के दौर में कई छात्र वटवृक्ष होकर उभरे हैं। इन सबों की जड़ में है स्कूली जीवन। जिसकी प्रशंसा सभी करते हैं। पर क्या सामाजिक जीवन सामाजिक मुददों पर हमारी पकड़ मजबूत होकर उभरी है ? यह भी हमारा लक्ष्य होना चाहिए।

लेखक प्रथम बैच के (1954-'60) के छात्र हैं और बतौर इंजीनियर एक लंबी कॉरपोरेट पारी के बाद अवकाश प्राप्त कर अब रांची में हैं।

सँवरते मकान बिखरते परिवार

शंभु प्रसाद सिन्हा

कभी हम घने जंगलों में रहते थे। पेड़ों की डालों पर उछलते- कूदते थे। भूखे-नंगे थे, मगर मगन थे। कर्मयोगियों को फल की चिंता कैसी? भूख लगी, हाथ बढ़ाया और तोड़ लिया। फिर आये डार्विन। बहलाया- फुसलाया, समझाया-बुझाया और काफी जद्दोजहद के बाद, इवौल्यूशन पढ़ाकर- हमें पेड़ों से नीचे उतारा। पिछले दो पैरों पर चलना और अगले दो हाथों से लैपटॉप चलाना सिखाया। पेड़ काटना और घर बनाना, सभ्यता की एकमात्र पहचान थी। न घरों का बनना थमा, न पेड़ों का कटना। जब तक पेड़ों से वास्ता था, एक अदद दुम की ज़रूरत थी। जब किसी काम की ही न रही, तो छोटी होने लगी और घटते- घटते लगभग ख़त्म ही हो गई। जैसे-जैसे जंगल ख़त्म होने लगे वैसे- वैसे हम सभ्य भी होने लगे। दुम की ही तरह, बस बचे- खुचे जंगलों के ख़त्म होने भर की देर है, एक दिन सारी मानवता सभ्य हो कर रहेगी।

मौसम, फ़ैशन, परम्परायें और रीति रिवाज चक्र की तरह आते-जाते और बारी- बारी वापस लौटते रहते हैं। पतलून की घटती-बढ़ती मोहरी की तरह, कभी ड्रेन पाइप तो कभी बेल बौटम। फ़ैशन चाहे जैसे भी हों, बहुत ज्यादा दिनों तक टिक नहीं पाते।

जब जंगलों में थे, 'जीवो जीवस्य जीवनम' के फ़ार्मूले पर जीते थे। हिंसक जानवरों का शिकार बनने से बचने और निरीह जानवरों का शिकार करने के लिये, सब इकट्ठा रहते थे। मर्द, औरतें, बच्चे, बूढ़े, सब रहने को आस- पास ही रहते थे, मगर घर-बार नहीं था, परिवार नहीं था। जिन्हें अरस्तू जी समाज कहना पसंद करते, वैसे ही ग्रुप थे, ग्रुप ऐडमिन थे। माताएँ थीं, मगर पिता नहीं थे। एक जैसी पाशविक भूख और हवस ग्रुप को तोड़ती थीं। एक जैसी लाचारी और मजबूरी समाज को जोड़ती थी। एक जैसा भय था, जो इकट्ठा रखता था। न कोई ज़िम्मेदारी थी, न कोई ज़िम्मेवार था। अजीब सी दुनिया थी, छोटा सा संसार था। न कोई रीत थी, न व्यवहार था। न प्यार था, न प्यारा परिवार था।

फिर एक दिन किसी बुजुर्ग की अध्यक्षता वाली पहली आपातकालीन सभा में अध्यक्षीय भाषण की शुरूआत कुछ ऐसी ही हुई होगी कि '' बस, बहुत हो गई आवारागर्दी। अब हर कोई अपनी-अपनी ज़िम्मेदारी सँभाले ले।।बाप बनने का शौक़ चर्राये, तो पहले शादी रचा ले। खुद को पति बना ले, अपना-अपना परिवार बसा ले।''

फिर बने नर-नारी के जोड़े।पति- पत्नी का एक अप्राकृतिक सा रिश्ता क्या बना कि अचानक दुनिया भर के अनगिनत रिश्ते उछल कर सामने आ गये। रिश्तों के अजीबो गरीब नाम पड़े।पुत्र- पुत्री, माता-पिता, बहन-बहनोई, भाई-भाभी, दादा-दादी, नाना- नानी, चाचा-चाची, बुआ- फूफा, ननद- ननदोई, साली- सलहज जैसे ढेर सारे नाते- रिश्तेदार बने जो अपने कहे गये, मगर ठीक उसी रोज रही- सही मानवता एक झटके में पराई हो गई। जिस रोज स्व और स्वजन बने, ठीक उसी दिन दुनिया स्वार्थी बन गई। माँ और ममता शायद पहले भी रही होगी मगर पिता और पुत्र मोह उसी दिन बना। विपत्तियों के अंदेशों से बचने के लिये संपत्तियाँ बनीं, वसीयत बने और प्रजातंत्र में परिवारवाद का रोज़गार भी उसी रोज बना।राष्ट्र बनाने का वादा करनेवाले, पुत्र मोह में धृतराष्ट्र बन गये। भारत के हर राज परिवार में महाभारत छिड़ गया।

रिश्ते तो बन गये, मगर बाल बच्चों के पैदा होने और फिर उनकी शादी होने के बाद ही परिवार और संयुक्त परिवार का आविष्कार हो सका। होमो सेपियन स्वभाव से बहुविवाही और बहुपत्नीगामी रहे। समाज का डर और महंगाई उन्हें बाँये-दाँये झाँकने से रोक कर रखता था। एक दूसरे की ख़ूबियाँ तो दूर से भी दिखाई दे जाती हैं मगर एक दूसरे की ख़ामियों को पास रह कर ढूँढ़ने और खुजली मिटा पाने में भी कभी-कभी सात साल लग जाते हैं। इतिहास गवाह है कि पटियाला का महाराजा हो या मिस्र का फेरों, जिगर हो तो कोई कम से कम तीन सौ पैंसठ रानियाँ तो पाल ही सकता है और कदाचित सूबे में लड़कियों का अकाल हो तो स्वयंवर कोई भले ही अकेले जीत ले, निभाना पाँच- पाँच मर्दों के साथ पड़ता है। बस एक पेंग्विन पक्षी के जोड़े को छोड़कर और कोई जन्तु नहीं जो किसी एक के साथ ही पूरी जिंदगी निभा ले और जीवन संगिनी की मौत के बाद 'अरे मर जाऊँगा, प्यार अगर मैं दूजा करूँगा' गा ले।

बड़ी सी दुनिया, नाना प्रकार के लोग, सबके अलग-अलग रीति रिवाज और भाँति- भाँति के विवाह। केवल हिंदुओं में ही शास्त्रों के अनुसार- ब्रह्म, दैव, आर्श, प्राजापत्य, असुर,

गन्धर्व, राक्षस और पिशाच जैसे आठ प्रकार के और इस्लाम में निकाह, मुताह, मिस्यार, इस्तिब्दा, शिगार और इज्तिमा जैस छः प्रकार के विवाह होते हैं। धर्म, मज़हब, संप्रदाय और भी हैं।आधे दर्जन से ज्यादा महादेश, दो सौ देश, अनगिनत प्रथायें, रीतियाँ, परम्पराएँ और अनगिनत तरह की शादियाँ। फिर भी नर-नारी को जोड़ने वाले हाइफन जैसी परिवार नाम की एक ही प्यारी संस्था, आज अचानक ख़तरे में आ गई है।

प्रेम विवाह और अन्य विवाहों में एक बारीक सा फ़र्क़ है। एक में विवाह के पहले प्रेम होता है और दूसरे में विवाह के बाद। वैसे प्रेम चाहे शुरू जब भी होता है, अहम सवाल यह है कि टिकता कब तक है? जवाब ढूँढना बड़ा ही आसान है, अगर चाहत और प्रेम के फ़र्क़ का पता हो। चाहत तो बस उसी की होती है और तभी तक बरकरार रहती है जब तक मिली न हो। इसीलिये मिलते ही ख़त्म हो जाती है। प्रेम वही होता है जो ग़लती से शादी में परिणत न हो सके। चाहत रोग से आहत मरीज अक्सर गलत उपचार के शिकार हो जाते हैं। हीर-रांझा, शीरीं- फ़रहाद, रोमियो- जूलियट, लैला- मजनू, रेशमा-शेरा, विल्हण- रतिलेखा और सोहनी- महिवाल जैसों की क़तार में शुमार होने की जगह, राशन की क़तार में खड़े नजर आते हैं। '' मिलन प्रेम का अंत, विरह जीवन है'' गुनगुनाते सुनाई देते हैं।

मैं गाँव में पैदा हुआ। संयुक्त परिवार वाली जन्मघूट्टी और मालिश की बदौलत ही बड़ा हुआ। सुबह बात- बेबात मुँह फुलाते और दोपहर साथ बैठ पत्ते बाँटते, बारहमासा गाते और हँसी- ठट्ठा करने वाले संयुक्त रोज़नामचे को मैंने होश सँभालने के साथ महसूस किया है। आज संयुक्त परिवार को

पुत्र- पुत्री, माता-पिता, बहन-बहनोई,भाई-भाभी, दादा-दादी, नाना-नानी, चाचा-चाची, बुआ- फूफा, ननद-ननदोई, साली- सलहज जैसे ढेर सारे नाते- रिश्तेदार बने जो अपने कहे गये, मगर ठीक उसी रोज रही- सही मानवता एक झटके में पराई हो गई।

दम तोड़ते और मरते, मैं अपनी आँखों देख रहा हूँ।

गांवों में उच्च शिक्षा नहीं थी। आइआइटी और आइआइएम जैसे बड़े कॉलेज तब तक नहीं खुले थे।लाखों के पैकेज वाली नौकरियाँ नहीं थीं। मगर संयुक्त परिवार नाम की एक

शानदार संस्था हर घर में मौजूद थी। आदम और हव्वा जन्नत से ज़मीन पर गिरे नहीं थे। वे अपने साथ जन्नत को यहीं ज़मीन तक उतार लाये थे। ये बात और है कि जिसे उधर बहिश्त या जन्नत कहते थे, उसे ही यहाँ संयुक्त परिवार कहने लगे। इम्तिहान में नंबर कम आने या नौकरी ना मिल पाने की निराशा से आत्महत्याएं नहीं होती थी। नशीली दवाइयाँ नहीं थीं। उड़ता समाज नहीं था। फ्रस्टेशन- डिप्रेशन नहीं था। मनोचिकित्सक नहीं थे। बीमा कंपनियाँ नहीं थीं। क्योंकि हर घर में, संयुक्त परिवार नाम की एक ख़ूबसूरत वजह मौजूद थी। वही लाख दुखों की एक दवा थी।वही ग्रुप इंश्योरेंस था। वही अरस्तू के समाज की बुनियाद थी।

विवाह और परिवार जैसे शब्द अपना अर्थ खोते जा रहे हैं। एक वक्त था जब परिवार नहीं बने थे। एक वक्त आनेवाला है जब परिवार नहीं होंगे। बस लिव इन वाले रिश्ते होंगे और अनव्याही मातायें होंगी। समलैंगिक साहचर्य जैसे अजीबो गरीब क़ानून होंगे। टेस्ट ट्यूब बच्चे होंगे और सरोगेट मदर होंगी। किराये की कोख वाली माताओं के जाने माने डेस्टिनेशन और उर्वरा मातृभूमि का नाम भारत होगा।

वक्त ने करवट बदला। तकनीकी शिक्षा का विकास और संस्कार का ह्रास हुआ। संस्कृत की जगह अंग्रेज़ी और संस्कृति की जगह अंग्रेज़ीयत आयी। समृद्धि बढ़ी, सुकून घटा। नये जोड़ों को ढेर सारे प्यार की जगह प्राइवेसी और स्पेस की ज्यादा ज़रूरत पड़ने लगी। संयुक्त परिवारों के टूटने और एकल परिवारों के बनने का फ़ैशन शुरू हुआ। सास- बहू वाले सीरियल हर चैनल पर टी आर पी बढ़ाने लगे। कारण ढेर सारे थे, मगर मुख्य कारण विकास था।

मनुष्य की आयु बढ़ने लगी। जनसंख्या बढ़ती गई, मगर खेतों का क्षेत्रफल सीमित रहा। कृषि पर आधारित रह पाना जब कठिन हो गया, औद्योगिक क्रांति आई और मुद्रा राक्षस पैदा हुआ। पहले दूध-दही की नदियाँ बहती और क्षीरसागर में गिरती थीं जहाँ शेषनाग थे और अधलेटे नारायण थे। समुद्र मंथन से निकले रत्नों की छीना- झपटी हुई। बहुत कुछ निकला, मगर लक्ष्मी भी निकलीं जिन्होंने नारायण का स्वयं वरण किया। उनकी किस्मत चमकी, लक्ष्मी नारायण बने और सत्यनारायण के रूप में पूजे जाने लगे। मगर टकसाल से निकलते खनखनाते सिक्कों की बदौलत एकदम से नक़द नारायण बन गये और 24X7 पूजे जाने लगे।

धातुओं से बने सिक्कों और काग़ज़ से बने करेंसी में नारायण दिखाई देने लगे। इंसान कब उपभोक्ता बन गया, पता ही नहीं चला। चीन के कारख़ानों में बना कूड़ा भारतीय बाज़ारों में पहुँचने और मकानों में सजने- सँवरने लगा। हर कोई घर बसाने की जगह मकान सजाने में लग गया। मॉल का कूड़ा मकान तक क्या आया हर घर दुकान लगने लगा। कूड़ा बटोरने की इस प्रतिस्पर्धा ने परिवार का कबाड़ा कर दिया। परिवार

प्यार से पलता है, मगर हम तो कूड़े के व्यापार में उलझ कर रह गये।

रोटी कमाने के लिये पहले हर घर से किसी एक का निकलना काफी था। मगर इंसान सिर्फ रोटी के सहारे रह नहीं सकता। सर्व शिक्षा, नारी शक्ति और बराबरी का हक़ मिला। पहले सिर्फ एक कमाता और दोनों खाते थे। अब दोनों कमाने और दोनों पीने लगे। नतीजन बच्चे जन्म लेते ही नौकरों की सोहबत में पलने लगे और सयाने होटलों में उम्र काटने और अस्पताल पहुँच कर मरने लगे। जो कभी सुख- दुख के साथी हुआ करते थे। अब 'सुख के सब साथी, दुख में न कोय' हो गये।

न गुरु रहे न ग्राम रहा। बस नाम का गुरुग्राम बच गया। जहाँ हम जीने की कोशिश करते हैं, वह इलाक़ा मॉल माइल कहलाने लगा। अनगिनत दुकानों के बीच गिनती के घर हैं, जो आये दिन उजड़ते जा रहे हैं। बाल- बच्चे ढलते सूरज और ढलती संस्कृति का पीछा करते पश्चिम दिशा की ओर भाग रहे हैं। उधर ग्रीन कार्ड और ग्रीन डॉलर है तो ट्रंप और रेशेसन भी। अजीब कश्मकश भरी जिंदगी है। एक मोहता- लुभाता है, दूसरा खदेड़ता- भगाता है। इधर ख़ाली मकान होटलों में तब्दील होते जा रहे हैं। हर मकान बाहर से घर और अंदर से दुकान जैसा लगता है। गेस्ट हाउस और पेइंग गेस्ट जैसे नक़ली नामों वाले मकान हैं। मेज़बान ढूँढे से नहीं मिलता। इंसानों की बस्ती में एस्कॉर्ट्स और दल्लों के दिखाये पतों पर हर कोई मेहमान है।

उड़ता समाज नहीं था। फ्रस्ट्रेशन- डिप्रेशन नहीं था। मनोचिकित्सक नहीं थे। बीमा कंपनियाँ नहीं थीं। क्योंकि हर घर में, संयुक्त परिवार नाम की एक ख़ूबसूरत वजह मौजूद थी।

विवाह और परिवार जैसे शब्द अपना अर्थ खोते जा रहे हैं। एक वक्त था जब परिवार नहीं बने थे। एक वक्त आनेवाला है जब परिवार नहीं होंगे। बस लिव इन वाले रिश्ते होंगे और अनव्याही मातायें होंगी। समलैंगिक साहचर्य जैसे अजीबो गरीब क़ानून होंगे। टेस्ट ट्यूब बच्चे होंगे और सरोगेट मदर होंगी। किराये की कोख वाली माताओं के जाने माने डेस्टिनेशन और उर्वरा मातृभूमि का नाम भारत होगा। होने को तो विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या शायद इधर ही होगी मगर साफ दिखाई दे रहा है कि तरक़्क़ी समाज को उस मुक़ाम तक पहुँचा कर छोड़ेगी जहाँ न प्यार होगा, न परिवार होगा।

बचपन में जिस आवासीय विद्यालय में पढ़ता था, वहाँ दर्जनों होस्टल थे जिन्हें गौतम, किशोर, रामकृष्ण जैसे अलग-अलग आश्रमों के नाम से पुकारा जाता था। सबसे पश्चिम वाले में मैं रहता था। हर रोज एक बड़े चट्टान पर अपने अकेलेपन के साथ बैठता और उदास सूरज को मूक साक्षी की नज़रों से, हर शाम ढलते देखता था। फ़िजां की ख़ामोशी अक्सर हम से कुछ कहती थी। ''गौर से सुनो।जब तक तुम्हारी जिंदगी का सूरज अपनी ढलान पर आये, परिवार नाम की संस्था का वजूद ख़त्म हो चुका होगा। शायद मरने से पहले तुम्हें वापस यहीं लौटना होगा। तुम्हारा अकेलापन, तुम्हारे समाज की नियति होगी। समाज के मूल्यों को संभाल पाने और एक सही दिशा दे पाने में अगर तुम निष्फल रहे, वापस इसी चट्टान पर अपने अकेलेपन के साथ आ कर बैठना। सब के सब यहीं अकेले या अपने जीवन साथी के साथ लौट आना। दो बड़े- बड़े आश्रम बनवाना।नाम रखना, वाणप्रस्थाश्रम और वृद्धाश्रम।''

लेखक 1958-'64 बैच के छात्र हैं । इंडियन एयरलांइस में कैप्टन रहे श्री सिन्हा इस समय गुरुग्राम में हैं और कला और साहित्य के प्रति अपना समर्पण और निखार रहें हैं।

अगले जनम मोहे शिक्षक ही कीजो

डॉ राजेंद्र झा

मैं अब भी यही मानता हूँ कि यदि ईश्वर पुनः जन्म दे तो अगले जन्म में भी मुझे शिक्षक ही बनाना और यदि चिकित्सा - शिक्षक का अवसर मिले तो सोने में सुहागा क्यूँकि इसमें चिकित्सक बनने का अवसर जो साथ संयुक्त है ! नेतरहाट विद्यालय और उसके पहले राम कृष्ण मिशन में प्रारम्भिक शिक्षा का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि कुछ ऐसे शिक्षकों को नज़दीक से देखने और समझने का मौक़ा मिला जो कई मायने में अद्वितीय थे । हमारे प्रधान जी दर साहब, बी के सिन्हा जी ,कांति जी ,वासुदेवन जी एच०के पी सिन्हा जी जैसे अनेकों अनमोल विभूतियों को नज़दीक से देखने और उनसे सीखने का शुभ अवसर कम उम्र में मिला यह मेरे भावी जीवन का सदा संबल रहा। मेरे आश्रमाध्यक्ष रहे श्रीमान सिंह साहब और देवघरिया जी ने श्रम की महत्ता और कार्य कुशलता की शिक्षा दी जो मेरा आजन्म पाथेय रहा। यूँ तो प्रारम्भ से ही नेतर हाट या समकक्ष आवासीय विद्यालय का शिक्षक बनने की इच्छा थी लेकिन बन गया चिकित्सक ! ख़ैर भगवान ने सुनी और राजेंद्र चिकित्सा महाविद्यालय राँची में ही पूर्ण कालिक शिक्षक -रूप में सहायक प्राध्यापक के पद पर जून 1990 में योगदान दिया । क्रमशः पदोन्नति मिली और अपेक्षा कृत कम उम्र में प्राध्यापक बना, फलस्वरूप चिकित्सा कार्य के अतिरिक्त पठन- पाठन से हमेशा ही लगाव बना रहा जिसका परिणाम था छात्रों और रोगियों का निर्बाध और अविरल स्नेह ! औषधि विभागाध्यक्ष - प्राध्यापक का दायित्व मिलने में काफ़ी देर हुई अतः मेडिसिन विभाग में मनोनुकूल परिवर्तन का अवसर देर से और मात्र तीन वर्षों के लिए ही मिला किंतु इन तीन वर्षों में ही मैंने लगातार परिवर्तन किए और सुनिश्चित किया कि प्रतिदिन और बिलकुल ठीक समय पर कक्षाएँ हों और छात्रों और शिक्षकों को लगातार कार्य का अवसर और सुविधा मिले। इसका सुखद परिणाम भी मिला कि मेरे छात्रों को लगातार पूरे देश में प्रतियोगिता परीक्षाओं में प्रथम स्थान मिले और उनके शोधपत्रों को प्रतिष्ठित राष्ट्रीय औरअंतर राष्ट्रीय पत्रिकाओं में स्थान मिला। देश भर के लब्ध प्रतिष्ठ संस्थाओं से आए चिकित्सा शिक्षकों ने हमें शत प्रतिशत परीक्षा फल से भी लगातार नवाज़ा । मरीज़ों की देख रेख में भी कई उल्लेखनीय सुधार किए गए जिसका परिणाम था मरीज़ों की संख्या में लगातार रेकर्ड बढ़ोत्तरी और गुणवत्ता में क्रमिक सुधार । मेरी यह निश्चित धारणा है कि आने वाले बरसों में यदि सही

मार्गदर्शन मिले तो राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान देश में शीर्ष स्थान प्राप्त करेगा और प्रदेश को गौरवान्वित करेगा ।

डॉ राजेंद्र के झा (1964-'70) बैच के छात्र हैं । हाल में उन्होंने रिम्स के मेडिसिन विभाग के अध्यक्ष पद से अवकाष प्राप्त किया है ।

TIN: 20830505852

SP

M/s SATISH PRASAD

Civil Contractors & General Order Supplier, Specialist in Construction Of Road & Building Works

Registered Address: Vishwanath Apartment, Near Ojha Market, Devi Mandap Road, Hesal, Ranchi, Jharkhand 834005
Permanent Address: Akanchha Picture Palace, P.O:-Mahuadanr, District: Latehar, Jharkhand 822119
Email: satish4715prasad@gmail.com Mob: +91_8987766504, +91_9431486051

RALLY TECH SERVICES

RALLY TECH SERVICES PRIVATE LIMITED

Electrical Projects:

- H.T & L.T Electrification for all type of Industries/Installations, Commercial Complexes, Townships etc.
- Transmission & Distribution system
- Substations up to 132KV
- Industrial/Street/Commercial Lighting projects.
- Integration of total system with SCADA/DCS/PLC.

Metallurgical:

- Submerged Arc Furnace from concept to commissioning of any size.
- Our own brand Critical furnace equipment.
- Raw Material feeding systems, bulk material handling for steel mills and other industries.

Mechanical & Structural Works:

- Industrial Structures & Equipments.
- Rotary Equipments .
- Oil/Water hydraulic & pneumatic
- Systems with necessary piping.
- Gas cleaning units.
- MEP.
- HVAC & AHU.
- Firefighting & fire detection system.

Civil Works:

- All types of Industrial Civil works & foundations for Equipment's & utilities.
- Industrial and commercial buildings with/without Pre-fabricated structures.
- Survey & Master planning.
- Architecture & landscaping.
- Land development .

जैसे लोग वैसे बोल

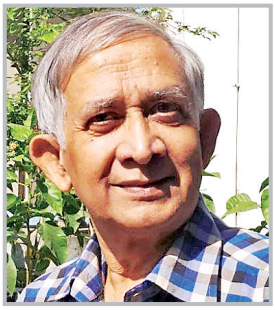

मित्रेश्वर

फ़ैज़ ने कहा था, ''बोल, कि लब आजाद हैं तेरे''मतलब यह कि जो आजाद हैं, वे बोल सकते हैं, मनमर्जी आजादी से । मगर, बंधनों में पड़ा कोई कैसे बोले मनमानी अनर्गल जुबान! लबों का आजाद होना सबके नसीब में नहीं होता। मसलन 'समर्थ' बोल सकता है निर्बाध, परन्तु, असहाय पर नकेल रहती है - नैतिकता की, परंपरा की, जीवन मूल्यों की,कानून की, शासन की । वह कैसे बोल पाए अर्गला हीन!

जो लब आजाद हैं वे बोल रहे हैं, जैसे लब आजाद हैं वैसा ही बोल रहे हैं। दंभ बोलता है, थैली बोलती है, कुर्सी बोलती है, अहंकार बोलता है बाकी सब देखते सुनते हैं । इसलिए पंडित मानते हैं कि - जैसे लोग, वैसे बोल।

इस बस्ती मे कुछ बोलते हैं और खूब बोलते हैं । मनचाहा बोलते हैं। चुनिंदा शब्दों से अपनी भाषा अलंकृत करते हैं । तत्क्षण *'सतसैया के दोहरे अरुनावक के तीर'* की याद आ जाती है। तभी वे हमारे रहबर हैं, हम अनुचर । तभी, वे नेता हैं हम झंडा बरदार । वे भाग्यविधाता, हम प्रजा । वे विधान बनाते हैं, लोगों को उससे बांधते हैं। गुरु ग्रंथ संविधान शरीफ उनकी जेब में तड़पता हैं, लोगों के लिए सिलता है जुबान-दिल-दिमाग ।

पंडित बताते हैं, जब अंग्रेजों का जमाना था तब कुछ लोगों ने आजादी के लिए जंग शुरू की। जिन्होंने मेहनत की उन्हें आजादी मिली। एक बड़ा तबका सोया रहा । उनके हाथों में आजादी आती भी कैसे ! जो आजाद हुए वे पूरी तरह आजाद हो गए, जो गुलाम रहे वे गुलाम ही रहे । खैर, वो मसला अलग है।

उस ज़माने में भी कई प्रकार के नेता थे। जो आजाद होना चाहते थे उनकी जुबान संयत थी - शालीन हद समझने वाली। बाद में कुछ नेता ऐसे हुए जिन्हें, कुछ समय के लिए 'साम्राज्य' की खिदमत करने का मौका मिला। विश्वयुद्ध के ज़माने मे उन्होंने सुभाष चन्द्र बोस को 'तोजो का कुत्ता' कहा क्योंकि, उन्हें डर नहीं था। निडर अलग बोल बोलेगा ही। असली गांधी महात्मा को भी निडर नेताओं ने 'अंग्रेजों का दलाल' कहा। अपने विदेशी आका को खुश रखने के लिए उन्होंने आजाद हिंद फौज को लुटेरों की सेना कहा।

पंडित मानते हैं कि जिनके पास सत्ता का,ओहदे का अथवा, खानदान का संबल रहा वे बोलने के लिए 'परवाह' करना भूलने लगे। पंडितों में इस बात के लिए मतभेद है कि, मर्यादा तोड़ने और हदें लांघने का काम शुरू किसने किया ? जितने झंडे उतने विचार।

गन्दी जुबान में जो लोग मजा पाते थे वे अपनी भड़ास निकालते थे, गम गलत करते थे। वजहें कई थीं। शिखरों में प्रदूषित शब्दों ने अपना उत्स पा लिया - पहले बद-जुबानी नीचे तबके की बात समझी जाती थी। समाजवाद के दौर में क्या बड़ा! क्या छोटा! पंडित मानते हैं कि, प्रगतिशीलों ने अपने कुशाग्र बोल से शीघ्र ही ख्याति प्राप्त कर ली। नेहरू और इंदिरा जैसी लोकप्रिय शाख्सियतों को चुन चुन कर अपशब्द कहना इनकी चलन में आ गया। आदरणीय लोहिया जी को इसका अतिरिक्त श्रेय दिया जाता है कि उन्होंने इस नई शैली के उद्गारों को नई ऊंचाई दी। समाजवादी वक्तव्य की सभी धाराएं कच्चे देशी धूलमाटी में सन कर मसालेदार जायका देने लगीं। राजनीति नई दिशा और गहराई पा रही थी, तब बोल का बदलना लाजिमी था। सभी राजनीतिक स्वार्थ समूह इसमें बढ़-चढ़ कर योगदान करने लगे। एक से बढ़ कर एक चुटीले-मारक-उत्तेजक शब्द मंचों से झरने लगे। आजादी पाने के बाद राजनीतिक हित आजाद होने लगे थे । मूल्यबोध विस्मृत होता जा रहा था, नई जरूरतें नयी जुबान पा गईं। सत्ता छूटने का भय और सत्ता पाने की लालसा ने नई भाषा को जन्म दिया। तभी जवाहर लाल को इन्होंने 'अमरीकी साम्राज्यवाद का दौड़ता हुआ कुत्ता' कहा। उन दिनों नए-नए सियासी शब्द कोष में जुड़ने लगे। सत्ता की लालच ने अभिव्यक्ति का रंग-ढंग बदल दिया । उनके लबों को नई आजादी मिली। गाली एक हथियार और एक रक्षा-कवच का काम करती है- यह सच सियासतदां समझ गये।

राजनीति की दुनिया एक चारागाह है। जिसमें सबके सब अपनी खुराक पाते हैं। सब एक-दूसरे के शत्रु सब। साथी भी। सभी आपस में सशंकित, परस्पर प्रतिद्वंद्वी भी! इस रिश्ते में अपशब्दों की भूमिका बदल गई। गद्दी पाने की जल्दबाजी और गद्दी खोने का भय दोनों अवस्था में तीखे शब्दवाण काम आने लगे। इस हाल ने राजनीतिक परिदृश्य को मनोरम बनाया है। तभी, आप जिसे अपनी तकदीर का खेवनहार समझते हैं उसे वे ब्रह्मराक्षस, नरपिशाच, आदमखोर नरभक्षी विशेषणों से अभिहित करते हैं । वे आजाद हैं फिर, बोलने पर पाबंदी लगे कैसे ? गाली

गलौज चल रही है।

ज्ञानी-गुणी खोज कर रहे हैं शुरू किसने किया!

इतनी मसालेदार बोली पहले नही थी। पहले संभ्रान्त अपने संयम और शील पर घमंड करता था।

तब, राजनीति का उद्देश्य था स्वतंत्रता की प्राप्ति। वह आजादी पाने के बाद उद्देश्य ही बदल गया। तिरंगा लहराने लगा तब अपनी, अपने खानदान की, अपनी जाति, और मजहब की फिक्र बन गई। अब सत्ता पाना था ,सत्ता बनाए रखना था तब वोट की फिक्र ने फरेब-साजिश कुटिलता के सहारे राजनीति को सबसे फायदेमंद व्यवसाय बना दिया। इसके फलस्वरूप राजनीति में अभिजात्य, कुलीनता, संभ्रांतता खत्म हो गई । अब त्याज्य मुद्रा-भंगिमा- बोली ऊंचे तबके में प्रवेश पा गई। जिन वर्गों को प्रभावित करना था वह आंगिक-कायिक-वाचिक भाषा 'नेताओं' को लाभ पहुंचाने लगी थी। 'देहाती जुबान' वोट कमाने का हथियार बन गई थी। जब बेचैनी बढ़ती थी, अवसाद बढ़ता था, निराशा गहराती थी तब मंच से, रैली में, बहसों और प्रेस कॉन्फ्रेंस में मिर्च सने बोल ज्यादा से ज्यादा व्यवहार में आने लगे। वही दौर अपने उफान पर है। बेचैन और अवसाद ग्रस्त आदमी प्रलाप-विलाप- सन्निपात में उल-जलूल बोलता ही है।

आज का नेता आमतौर पर बद-जुबानी, बद-मिजाजी, बद-सलूकी के लिए बदनाम है। पहले भी कुछ ऐसे थे। अभी यह दौर चलन में है। सब जहरीले शब्दवाणों से लैस हैं । पुरानी पीढ़ी के नेताओं में यह शौर्य नहीं था। इंदिरा से बहुत आगे की चीज हैं राहुल,जवाहर और नरेंद्र में फर्क है; लिमये और लालू की क्या तुलना; नरेंद्रदेव और अखिलेश में गंगोत्री और कानपुर की गंगा का फर्क है। सरोजनी नायडू और ममता दीदी दो ध्रुवों की जंतु दिखती हैं।पुराने और नए में इरादे का, हरकत का, मंसूबे का, ईमान का - सबका फर्क है। बोलचाल का फर्क तब होगा ही।

गुणीजन कहते हैं - जैसे लोग वैसे बोल। शख्स की ऊंचाई, गहराई मोटाई और कमीनगी, नीचता,नंगई और ज्ञान,संस्कार, विरासत और लोभ लालच मनसूबा सभी मिलकर चुनते हैं, अभिव्यक्ति के माकूल शब्द। चुनिंदा शब्द अनायास नहीं चिपकते होंठों से-उसके लिए एक व्यक्तित्व गढ़ना होता है। एक नेता, बड़ी साधना के बाद, पाता है खुद को प्रकट करने के योग्य जुबान। बहुत परिश्रम से नेता अपनी हरकतें, हाव-भाव, बात-विचार प्राप्त कर पाता है। बात मानिए साधना का फल हैं ओवैसी, मणिशंकर , शशि थरूर, उमा भारती । लालझंडों, हाथियों, तीर धनुष, मुर्गे और धमसा की जुबान प्राप्त करना आसान नही हैं । आम आदमी का इतने जहरीले शब्दास्त्रों से सामाजिक जीवन में गुरुता पाना! क्रोध में, मोह में, प्रेम में , सोने-जागने में, सुबह -शाम में अपने हित के लिए एक-निष्ठ रहना कोई साधक ही संभव कर सकता है। राजनेताओं की साधना एकनिष्ठता और अपने हित के लिए ईमान-धर्म स्थगित करने की क्षमता सभी नहीं पा सकते। अपनी हरकतों-हथकंडों

और नुकीली जुबान से वे अपना परिचय देते हैं और लोगों से अपना जुड़ाव बनाते हैं । इस बस्ती की राजनीति मे अपना गुंडा,अपना लफंगा, अपना बड़बोला अच्छा लगता है। दबंग हो और अपना हो , बाहुबली हो और अपना हो। यह अपनापन गाली -गलौज का टाइप इंगित और साबित करता है।

एक मजेदार सच यह भी है, कि नेता दूसरे नेता के बारे में सौ-फी-सदी सच बोलता है। वे एक -दूसरे को पहचानते हैं तब, पूरे विश्वास से उसे 'चोर' बोलते हैं जबकि वह इन्हें 'लुटेरा' कहता है -हर मंच से हर अवसर पर। यह दुनिया समानता की है । टुच्चा नेता भी बड़े नेता को ,सोच विचार कर गालियां दे सकता है। ध्यानाकर्षित करने के लिए अथवा अपना अवसाद निकालने के लिए। गालियां देते समय पुराने स्वीकृत सदाचारों को भूलना और खोना पड़ता हैं। गालियों के चलन ने नेताओं की जमात को आकर्षक बनाया है। आप मितभाषी, मृदुभाषी, मंजु भाषी की तलाश मे हैं तो क्या काम है आपका, इस बदनाम बस्ती में। पंडित लोग गाली गलौज मारपीट करते विधायक, उद्दंड बदजुबान मंत्री, राजनीतिक गिरोहों के ओहदेदारों और चापलूसों, चमचों, दलालों, विदूषकों,नटुओं के बोल का विश्लेषण भी करते हैं। खुद की जाति-गोत्र-धर्म घोषित करने को बेताब धर्म निरपेक्षता की बात करता हुआ दूसरे को गरियाता है। वंश मजहब इलाके के लिए सर्मिपत दूसरे को फासिस्ट ,सांप्रदायिक, तानाशाह कहता है। भाषा की मर्यादा आज के बाज़ार में अर्थ खो चुकी है। चुनाव प्रचार के नाम दाखिल आयोजन गाली गलौज का प्रयत्न प्रतीत होते हैं। हाजिर भीड़ अपने नेता के अपशब्द सुनकर गदगद होती है । आप इसे स्तरहीन कहिए, पतनशीलता से आप चिंतित रहिए किन्तु, आज का सियासी बाजार इन लफ्ज़ों से पटा है। संसद में जाने के लिए असंसदात्मक व्यवहार बड़े काम आते हैं । तभी, हवा में गूंजते हैं खून की दलाली, नाली का कीड़ा, मौत का सौदागर जैसे संबोधन। तभी जवाब में मिलता है गड़े मुर्दों के पोस्टमार्टम का ब्यौरा। चायवाला के जवाब में बारवाला और सरकारी दामाद होने की बात उजागर की जाती है। एक नंगा दूसरे की नंगई की चर्चा करता है। यह पूरे परिदृश्य को नई सूरत देता है-आपके लिए यह ना-गवार लेकिन, यही राजनीति का बाज़ार है। सभी को अपने अपने वोट बैंक की फिक्र है। यह कुछ नया भी नहीं है। इन्हीं , सड़कों ने सुना है-'तिलक, तराजू और तलवार, इन्हें लगाओ जूते चार' और अभी भी 'गूंजता है भूराबाल साफ करो'। दिक्कुओं को धमकाने के लिए क्या नहीं सुनती हैं झारखंड की गलियां । जितनी जहरीली जुबान उतनी वोट पाने की उम्मीद। तभी, बदबू फैलाने की प्रतियोगिता चल रही है। किसी को कुछ भी करने का सर्वाधिकार है। जितनी उत्तेजना बढती है उतना मुख़र होते हैं आजाद लब। गुस्सा बढ़ रहा है तब बदजुबानी बढ़ रही है। कोई कुछ सुनने को तैयार नहीं किन्तु, कुछ भी कहने के लिए तैयार है।

पुराने आदर्श इतिहास के पन्नों में दफन हो गए हैं । नेताओं की इस भीड़ में अरविंद, तिलक, सुभाष, भगत, अम्बेडकर, चित्तरंजन, चापेकर, मानवेन्द्र, कामा या अरुणा आसफ अली, एनी बेसंट, गांधी, जयप्रकाश आजाद, सीमांत गांधी या उनकी संतति तो आप नहीं ढूढ़ रहे ? मन -वचन -कर्म की पवित्रता वाली इस कालिख की कोठरी में अब वे नहीं मिलते। जिन्हें 'आजादी' मिल चुकी है नैतिकता के बंधनों से,उनके पास आदर्श नहीं है बस अपने निजी इरादे हैं । जिन नेताओं के घोषित कार्यक्रम थे, निष्ठा थी और उत्सर्ग का प्रबल भाव था। ये दूसरे पथ के राही थे। वैसे यह भी सच है कि जब नेता आजाद है तो, जनता उनके पंजे में है।

हर व्यवस्था नियंत्रण-संयम-हद तय करती है। सोवियत व्यवस्था के प्रतिबंध थे माओवाद की बंदिशें थीं उसी प्रकार पूंजीवादियों ने बड़ी मुश्किल से महिलाओं के साधारण मूलाधिकार स्वीकार किए। किस देश में किस मुश्किल से मतदान का अधिकार मिला वह अलग कहानी है। कोई परिवार, विद्यालय, संस्थाएं या संविधान बोलने की असीम आजादी नहीं देते। किस महजब में कितनी बोलने की आजादी है ! मर्यादा ना हो ,संयम ना हो,राष्ट्रीय हित के लिए अटूट ध्यान ना हो तो लोकतंत्र विकृत होगा ही। नेताओं की असभ्यता, असंयम, मानसिक दिवालयापन ने लोकतंत्र के भारतीय संस्करण का बहुत बुरा किया है। सच है कि गंदे बोल खट्टा-मीठा-चटपटा स्वाद देते हैं किन्तु, यह सेहत के लिए बहुत बुरा है। बस्ती के नादान लोग उन्हें ही विधायिका का प्रवेश पत्र दे देते हैं जिनकी जगह जेल में होनी चाहिए।

गलत राह 1947 के पहले ही तय हो चुकी थी। जिस तंत्र से उपनिवेशवाद संरक्षित हुआ था वही नये शासन को भी सुरक्षित करने लगा। राजनीतिक मर्यादा का भाव धीरे - धीरे विलोपित होने लगा। 1947 के बाद हमारा तंत्र, लूटतंत्र, भ्रष्टतंत्र, धनतंत्र पशु तंत्र बन गया । तब क्या बोली का ध्यान,तब क्या भाषा की मर्यादा।

यह हाल निहित स्वार्थों ने जानबूझ कर बनाया। वे चाहते थे कि पवित्र संयत सदाचारी और प्रतिबद्ध तत्व सत्ता से दूर रहें। अतः राजनीति को बदनाम और कलंकित कर उसे डरावना बनाया। चील गीद्ध जब आकाश में मंडराते थे तब, भयभीत पवित्र आत्माओं ने राजनीति की दुनिया को खुद के लिए वर्जित मान लिया। अवश्य ही बहुतरे अपवाद हैं । अवश्य ही अच्छे लोगों की भी मौजूदगी है। किन्तु, ये अपवाद स्वरूप मौजूद हैं ।

अभी अपशब्द चल रहे हैं । होड़ लगी है । नई पीढ़ी के नेताओं ने अपने पुरखों का सबक भुला दिया। पूरा नजारा ही बदल गया है। नई सियासत के लिए विरासत से मिले जीवन मूल्यों का अर्थ मिट गया। तभी सांसद अपनी असंसदीय हरकतों के लिए विख्यात हैं। सत्तापीठों पर अभियुक्तों का अधिकार है। संसद में जो कुकर्म होते हैं वह अपने घर आंगन में भी सही नहीं माने जा सकते।

ऊंचे मंचों से भी गर्जना की जाती है- 6 इंच छोटा करने की। अपराध करने के लिए पुरस्कारों का ऐलान होता है । बड़बोलों की धमकी सीमा हीन। वह सब कस्बों-मुहल्लों में अनुकरणीय बन जाता है। ऐसा होता है अपने समर्थकों-चमचों के उत्साह वर्द्धन हेतु। निकृष्ट भाषा असरदार होती है। जानवरों की उपमा, मा-बहन को गालियां, संहार की घोषणाएं !

कहीं लॉ और ऑर्डर है या नहीं-आप सोचते रहिए- इसके सिवा एक निरीह और कर क्या सकता है ! बस्ती शरीफों की है- रहना है तो रहिए। महिलाओं को अपमानित करने वाली जुबान - जातिसूचक शब्दों का व्यवहार-तीव्र पतनशीलता, रसातल की ओर उन्मुख देश का गमन- सब असंदिग्ध है। छोटे बड़े नेताओं का बॉडी लैंग्वेज परखिए और हालात समझिए। लेकिन, हिपोक्रेसी बस्ती का चरित्र है ना !

इस पतन के अपराधी सभी हैं ,सत्ताहीन भी, सत्तासीन भी। दोनों खोखले और संदिग्ध। अंधेर और अंधेरे के लिए जिम्मेदार। अभद्रता दोनों की फितरत। दोनों ने राजनीतिक दुनिया को कलंकित किया है। उन सभी की वजह से शर्म सियासत की दुनिया में वर्जित है। लाज एक गुण है जो प्रकृति ने सिर्फ आदमी को नसीब की। वह लाज आपने किसी 'नेता' में देखी है। पंडित कहते है कि, लजाएगा तो उस दुनिया में नहीं टिक पाएगा। पुरानी संभ्रांतता , आदर्शनिष्ठता और सदाचार ओहदेदारों के लक्षण नहीं। नेता अब लफ्फाजी के बल पर अपनी रोटी पाते है। पहले गुंडे-लफंगे नेपथ्य में रहते रहते थे, अब वे विधायिका में प्रवेश चाहते हैं । कानूनों को मजाक बना देने वाले कानून निर्माण का हक पाते हैं - यह सुयोग उनके जहरीले शब्द वाणों का भी प्रतिफल है ।

इस हाल की वजह है सियासती दुनिया का तनाव, प्रतिस्पर्धा, निराशा, संशय, अवसाद और विफलता का भय। नकारात्मक सोच इन्हें आक्रामक और हिंसक बनाती है। बेचैनी में वह दुष्ट और कमीना, खतरनाक और विषैला बन जाता है । अभी चुनावों की आहट है । छटपटाहट बढ़ रही है । शब्द वाणों में जहर लपेटा जा रहा है । निशाने साधे जा रहे हैं।

शुक्र है कि आज भी राजनीति की दुनिया में कुछ शीलवंत, मर्यादित, मृदुभाषी हैं । इनकी संख्या बेहद कम है । अन्य अल्पसंख्यकों पर सियासत की नजर जरूर है किंतु, इन सभ्य अल्पसंख्यकों की फिक्र किसी को नहीं । कोई गिरोह अपनी जमात में मौजूद संभ्रांत भाषा को तनिक तरजीह नहीं देता । काटने-बांटने-तोड़ने-ढाहने का काम राजनीतिक कर्म है तब नरेंद्र देव, या दीन दयाल, नम्बूदरीपाद या कामराज, गोविंदवल्लभ या पुरुषोत्तम दास टंडन जरूर नकारे जाएंगे । अच्छा है कि कुछ 'तूती' आज भी बोलती है । बस, नक्कार खाने में उसके बोल कोई सुनता नहीं । मगर, इनसे कल के लिए भरोसा जिंदा रहता है।

लेखक 1958-'64 बैच के छात्र और कोल्हान विश्वविद्यालय के पूर्व प्राध्यापक (इतिहास) हैं।

पौराणिक कथाओं और प्राचीन दर्शन की प्रासंगिकता

पारिजात सिन्हा

पौराणिक कथाओं, प्राचीन दर्शन,और मिथकों का प्रत्येक समाज में अस्तित्व होता है और प्रत्येक समाज के विभिन्न पहलुओं में इनका सकारात्मक योगदान भी होता है। *विस्तार से देखें तो यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक समाज में पौराणिक कथाएं, मिथक, और दर्शन न सिर्फ विज्ञान के साथ साथ अस्तित्व में होते हैं बल्कि, व्यापक अर्थों में,ये पारंपरिक विज्ञान और आधुनिक विज्ञान के आरंभिक चरण भी प्रतीत होते हैं । यह भारत के सन्दर्भ में उतना ही सत्य है जितना पश्चिमी देशों के सन्दर्भ में ।*

विज्ञान में अग्रणी माने जाने वाले पश्चिमी-जगत में विज्ञान के साथ साथ धार्मिक मान्यताएं, पौराणिक कथाएं या मिथक (माइथोलॉजी), और दर्शन उतने ही प्रचलित हैं जितने वे भारत में विज्ञान के साथ प्रचलित हैं *'इन पौराणिक कथाओं ,मिथकों, दर्शन , और परम्पराओं का अपना ही सौन्दर्य है और वे कहीं से भी विज्ञान कहे जाने वाले क्षेत्र की प्रगति में बाधा नहीं बनते, बल्कि उसमें अपना सकारात्मक योगदान करते हैं'* भारत में उपग्रह छोड़े जाने के पहले वैज्ञानिक अगर नारियल फोड़ने की पौराणिक परम्परा का निर्वाह करते हैं तो पश्चिम में वैज्ञानिक ऐसे शुभारम्भ के पहले अक्सर अपने हाथों से 'होली क्रॉस' की भाव-मुद्रा बनाते हैं। ये परम्पराएं उन्हें आतंरिक शक्ति प्रदान करती हैं। पश्चिम की प्रसिद्ध पत्रिका 'नेचर' में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार अमरीका में बड़ी संख्या में वैज्ञानिक ईश्वर, परम्पराओं, और मिथकों आदि में विश्वास करते हैं ।

उदाहरण के तौर पर देखें तो पश्चिम में कृषीय-संरक्षक और युद्ध-देवता के रूप में मंगल, या मंगल ग्रह यानि 'मार्स' उतना ही महत्वपूर्ण, मनोहर, लोकप्रिय, और सारर्गिभत है जितना भारत तथा अन्य पूर्वी देशों में है । पश्चिमी पौराणिक कथाओं में मंगल यानि मार्स प्रजनन की देवी जूनो के पुत्र हैं जो

> **"भारतीय समाज का यह हिस्सा दरअसल इस उपहास के ज़रिये अपनी मानसिक संकीर्णता को उजागर करता है, वह यह भूल जाता है कि पौराणिक कथाएं और मिथक दरअसल प्राचीन समाज की जीवन्तता प्रदिशत करते हैं**

फ्लोरा द्वारा जूनो के उदर को एक जादुई पुष्प से स्पर्श करने पर पैदा हुए। मंगल (मार्स) को पश्चिमी पौराणिक मान्यताओं ने युद्ध का देवता माना है जो प्रेम की देवी माने जाने वाली वीनस यानि शुक्र ग्रह से प्रेम करते हैं । पश्चिमी मान्यता है कि मंगल देवता का अस्त्र भाला अभी भी रोम के प्राचीन राजा के महल

में सुरक्षित रखा हुआ है जिसमें रोम पर किसी भी खतरे के पूर्व एक कम्पन देखा जाता था। पश्चिमी जगत की ये भी मान्यता है कि जूलियस सीजर की हत्या के पूर्व भी इसमें कम्पन महसूस किया गया था । कहते हैं कि एक भेड़िये ने मंगल (मार्स) के पुत्र को स्तनपान कराया था; इसीलिये युद्ध-स्थल पर भेड़िये का अवलोकन आगामी विजय का प्रतीक माना जाता था। पूरी रोमन सेनाएं मंगल-देवता (मार्स) को बड़े ही आदर भाव से पूजती थीं। वहीं ग्रीक सभ्यता में उनके समकक्ष 'एरीज' जेअस और हेरा के पुत्र माने जाते हैं। भारतीय पौराणिक कथाओं में मंगल का सम्बन्ध हमारे एक युद्ध-देवता कार्तिकेय से बताया जाता है जो, कुछ मत के अनुसार, महादेव शंकर और पार्वती के पुत्र हैं। कुछ अन्य मत के अनुसार वे अग्नी और गंगा के पुत्र हैं ।

पश्चिमी-जगत अपनी तमाम वैज्ञानिक उपलब्धियों के साथ साथ अपनी पौराणिक कथाओं और मिथकों पर भी अत्यधिक गर्व का अनुभव करता है लेकिन भारतीय समाज का एक छोटा सा हिस्सा अपनी इन परम्पराओं और पौराणिक कथाओं का उपहास उडाता नज़र आता है। भारतीय समाज का यह हिस्सा दरअसल इस उपहास के ज़रिये अपनी मानसिक संकीर्णता उजागर करता है। वह यह भूल जाता है कि पौराणिक कथाएं और मिथक दरअसल प्राचीन समाज की जीवन्तता को प्रदिंशत करते हैं।

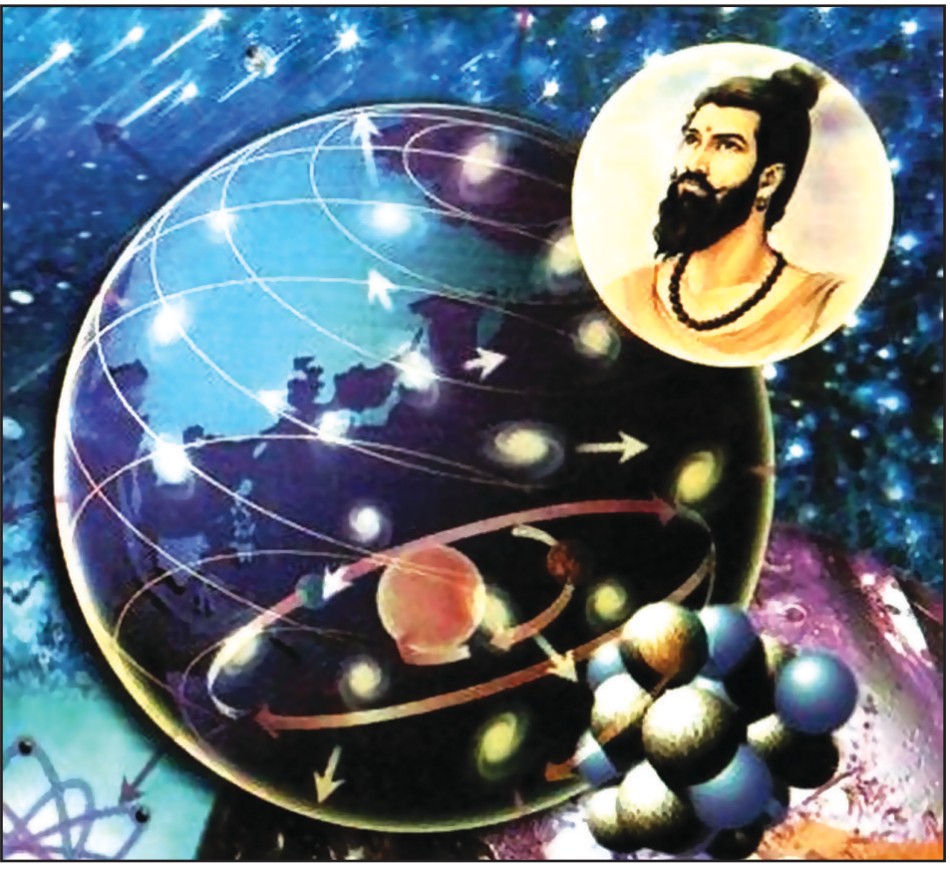

पश्चिमी-जगत हो या पूर्वी-जगत, हर जगत की और हर देश की अपनी अपनी पौराणिक कथाएं होती हैं, मिथक होते हैं। धार्मिक मान्यताएं होती है। प्राचीन दर्शन होता है। किसी भी देश की पौराणिक कथाएँ, मिथक, प्राचीन दर्शन या धार्मिक मान्यताएं यह प्रमाणित करती हैं कि उस देश की प्राचीन सभ्यता बौद्धिक रूप से जीवित थी, सोचती थी, कल्पना करती थी, प्रश्न उठाती थी, और उत्तर देती थी । पौराणिक कथाएं, प्राचीन दर्शन, और मिथक इस बात के साक्ष्य होते हैं कि प्राचीन सभ्यताएं बौद्धिकतः मृत नहीं थी। प्राचीन काल की पौराणिक कथाएं और मिथक (माइथोलॉजी) आज साहित्य कहलाते है, कला कहलाते है, और आधुनिक विज्ञान तथा इतिहास-शोध में योगदान देते हैं। जीवन व ब्रह्मांड सम्बंधित जो प्रश्न आज का आधुनिक विज्ञान तथा दर्शन जिस विस्मय-बोध से उठाता है और उत्तर देता है, हज़ारों वर्ष पूर्व उन्हीं प्रश्नों को उसी विस्मय-बोध से प्राचीन सभ्यताओं ने भी उठाया और अपने ढंग से उत्तर दिया था - उन्हें ही हम आज मिथक (माइथोलॉजी) कहते हैं, पौराणिक कथाएं कहते हैं, प्राचीन दर्शन कहते हैं। मनुष्य का विस्मय-बोध और उसकी उत्सुकता ही विज्ञान और दर्शन का स्त्रोत है, और इस लिहाज से हमारी पौराणिक कथाएं या हमारे मिथक (माइथोलॉजी) और हमारा प्राचीन दर्शन हमारे आज के विज्ञान और दर्शन का प्राचीनतम रूप हैं। वे प्राचीन सभ्यताओं की अति कठिन परिस्थितियों में भी ज्ञानार्जन की असीम उत्सुकता, जीने की अदम्य इच्छा और उनके संघर्ष-भाव को दर्शाते हैं । वे किसी भी देश और समाज की सांस्कृतिक धनाढ्यता और निरंतरता के प्रतीक होते हैं।

यह अकारण नहीं है कि आधुनिक भौतिकी के एक प्रमुख संस्थापक व नोबेल पुरस्कृत वैज्ञानिक क्वांटम भौतिकशास्त्री हैसन्बर्ग का कहना था कि क्वांटम-भौतिकी के सिद्धांत भारतीय दर्शन से प्रभावित थे; टैगोर के साथ भारतीय दर्शन पर अपनी बातचीत के विषय में वे कहते हैं, ''इस बातचीत के बाद अब तक असंभव से लगने वाले [क्वांटम सम्बंधित] विचार अब अचानक मुझे सार्थक प्रतीत होने लगे और इससे मुझे बहुत सहायता मिली। उनकी बातचीत का यह अंश भौतिकविद फ्रित्ज़ोफ काप्रा की प्रसिद्ध पुस्तक, ''*अनकॉमन विजडम* में उल्लिखित है। केन विल्बर द्वारा संपादित प्रसिद्ध पुस्तक द *होलोग्रैफिक पाराडाइम एंड अदर पैराडोक्सेज* में यह उल्लिखित है कि कैसे भौतिकशास्त्री फ्रित्ज़ोफ कापरा के साथ बातचीत

में हैसन्बर्ग कहते हैं, क्वांटम विज्ञान उन लोगों को आश्चर्यजनक प्रतीत नहीं होगा जिन्होंने वेदों को पहले ही पढ़ लिया है। मैं वेदों के साथ इसकी समानांतरता से पहले ही परिचित था और भारत यात्रा के दौरान जब मैं टैगोर का मेहमान था तब उनसे भारतीय दर्शन पर लम्बी बातों से मुझे अपनी सिद्धांत-रचना में बहुत मदद मिली ... एक पूरी सभ्यता (भारतीय) ही है जो ऐसे (क्वांटम) विचारों से पहले से ही परिचित है *विश्व विख्यात अंतरिक्ष -वैज्ञानिक डॉ कार्ल सागां अपनी पुस्तक कोसमोस में लिखते हैं, हिन्दू धर्म ही विश्व का एक ऐसा धर्म है जो इस वैज्ञानिक-विचार के प्रति सर्मिपत है कि ब्रह्मांड स्वयं असंख्य बार निर्मित होता है और नष्ट होता है* । ये एकमात्र ऐसा धर्म है जिसमे समय का पैमाना वही बताया

गया है जो आधुनिक विज्ञान का है; जब यूरोप के विद्वान ब्रह्मांड के कुछ हज़ार वर्ष पुराना होने की बात करते थे उस वक्त मायन सभ्यता लाखों वर्षों की बात करती थी, और हिन्दू उसी वक्त अरबो-खरबों की बातें करते थे। अमरीकी विद्वान स्टेफेन पोर्थेरो ने अपनी पुस्तक 'गॉड इज नॉट वनः एइट राइवल रिलीजन्स दैट रन द वर्ल्ड एंड व्हाई देयर डिफरेंसेज मैटर' नोबेल पुरस्कृत क्वांटम भौतिकशास्त्र के एक संस्थापक भौतिकशास्त्री नील्स बोर को उद्धृत करते हैं, ''जब मुझे प्रश्न पूछने होते हैं , तब मैं उपनिषद् के पन्ने पलटता हूँ । क्वांटम भौतिकी के एक अन्य संस्थापक व नोबेल पुरस्कृत वैज्ञानिक एर्विन श्रोडीन्गर अपनी पुस्तक 'माइ लाइफ' में लिखते हैं,''क्वांटम मेकानिक्स की खोज दरअसल भारतीय वेदों के मुख्य विचारों को रूप देने की कोशिश थी यानि वेदों में पहले से ही निहित इस ज्ञान ने विज्ञान के इस जटिल विषय के जन्म में अहम् भूमिका निभाई। प्राचीन दर्शन और ज्ञान के विषय में ऐसे ही विचार वैज्ञानिक टेस्ला, आइंस्टीन, ओपेनहाइमर, और आर्थर होम्स समेत कई विद्वानों ने व्यक्त किये है। ऐसे वैज्ञानिकों और प्राचीन दर्शन और ज्ञान के विषय में उनके सकारात्मक विचारों की सूची लम्बी है।

पश्चिमी जगत के वैज्ञानिकों और विद्वानों ने बड़ी सहजता और निष्ठा से ये स्वीकार किया कि आधुनिक विज्ञान के विकास में एक महत्वपूर्ण प्रेरणा-स्त्रोत और सहायक भारतीय वेद-दर्शन रहा है। विज्ञान की कई ऊंचाइयों को पार करने के बाद भी पश्चिमी जगत ने अपने मिथकों (माइथोलॉजी), अपनी धार्मिक मान्यताओं, अपने प्राचीन दर्शन और यहाँ तक कि भारतीय पौराणिक कथाओं और भारतीय प्राचीन दर्शन का भी कभी उपहास नहीं उड़ाया और ना ही अपने यहाँ प्रचलित मिथक या धार्मिक मान्यताओं का उद्धरण दे कर अपनी किसी महान वैज्ञानिक की उपलब्धि पर सस्ती और छिछली टिप्पणी की । भारत में लेकिन कुछ मुट्ठी भर कुंठित व अपरिपक्व लोग सस्ती लोकप्रियता के लिए भारतीय प्राचीन दर्शन, पौराणिक कथाओं, मान्यताओं, और परम्पराओं को उपहास का विषय बनाने का मौक़ा नहीं चूकते। अपने मिथकों, प्राचीन दर्शन, और पौराणिक कथाओं का उपहास दरअसल अपने वर्तमान समाज की नींव का उपहास है, अपने अस्तित्व के गौरव का उपहास है, कल्पनाशीलता से परिपूर्ण अपने बचपन का उपहास है । शुक्र है कि पश्चिमी और पूर्वी जगत के परिपक्व समाज ने विज्ञान के अपने बढ़ते कदम के साथ साथ अपनी प्राचीन सभ्यताओं की जीवन्तता और बौद्धिकता के सारर्गिभत और सरस प्रतीक यानि मिथकों, पौराणिक कथाओं, प्राचीन दर्शन, और परम्पराओं के प्रति अपने सम्मान को बरकरार रखा है।

आधुनिक विज्ञान में भारत के त्वरित विकास के साथ साथ हमारा प्राचीन और नवीन भारतीय दर्शन और हमारी पौराणिक कथाएं भी हमारे लिए गर्व का विषय हैं । ये सब अपने अपने काल खंड में तत्कालीन भारतीय समाज की जीवन्तता और बौद्धिकता के परिचायक हैं और सम्माननीय हैं। आइये हम अपने इस महान प्राचीन भारतीय दर्शन और अपनी समृद्ध पौराणिक कथाओं पर गर्व करें।

परिजात सिन्हा (1979-'84) बैच के छात्र हैं। व्यस्त और सफल कारपोरेट पारी के बाद वे लेखक, सामाजिक- राजनीतिक विश्लेक, और प्रबंधन सलाहकार के रूप में समाज की सेवा कर रहे हैं।

www.premierbearing.com

PREMIER

ONE VISION COMMITMENT

Premier Bearings is proud to receive the 'Highest Sales Award 2017' for Schaeffler Products

For the last four decades, Premier Bearings has been transforming experience and excellence into a winning formula. This year like the past 15 years, we are continuing the winning habit as the No.1 Industrial distributor for Schaeffler products.

Over the years we have followed one goal with a unified vision - to be the number one choice of consumers and remain committed to this mission of excellence.

Founded in 1975, the Premier Group is India's leading Industrial bearing distributor with 21 branches across India. Embracing the "ease of doing business" approach, we strive to be a partner that enhances the productivity of customers.

SCHAEFFLER

INA FAG

Authorised Industrial Distributor

Premier (India) Bearings Ltd.

Head Office: 1407, 'Diamond Heritage', 16 Strand Road, Kolkata – 700001
Ph.: +91 33 40332000 • E-mail: pibl@vsnl.com

Kolkata | Ahmedabad | Bengaluru | Bharuch | Bhopal | Bhiwadi | Chandigarh | Chennai Coimbatore | Gandhidham | Gurugram-NCR | Guwahati | Hosur | Hospet | Jamshedpur Kochi | Ludhiana | Mumbai | Nashik | Raipur | Surat | Trichy

नवोदय विद्यालय योजना

स्कूली शिक्षा में एक सफल प्रयोग

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के क्रियान्वयन को आगे बढ़ाते हुए सरकार ने नवोदय विद्यालय योजना शुरू की। इस योजना के तहत 22 राज्यों में 300 और केंद्र शसित राज्यों में 7 नवोदय विद्यालयों की स्थापना की गयी। जवाहर नवोदय विद्यालयों का संचालन और इसके लिए आवश्यक वित्त का प्रबंध नवोदय विद्यालय समिति करती है जो पूरी तरह आवासीय और सह शिक्षण संस्थान हैं। लड़के और लड़कियों के लिए अलग-अलग होस्टल की व्यवस्था होती है। इस विद्यालय के सभी छात्रों के लिए रहना, खाना आवश्यक पुस्तकों और स्टेशनरी की व्यवस्था निःशुल्क होती है। ये विद्यालय छात्रों को केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड नयी दिल्ली की सेकंडरी/सीनियर सेकंडरी परीक्षा के लिए तैयार करते हैं।

जवाहर नवोदय विद्यालय में प्रवेश पांचवी कक्षा में प्रतियोगिता परीक्षा के आधार होता है। इस प्रवेश परीक्षा का संचालन एनसीइआरटी करती है। इस सच को स्वीकार करते हुए कि नवोदय में प्रवेश लेने वाले छात्रों की प्रवेश के पहले तक की शिक्षा उनकी मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में हुई होगी, कक्षा आठ तक इसी माध्यम में उन्हें नवोदय विद्यालय में पढ़ाने की व्यवस्था की गयी है। इस अवधि में हिंदी/अंग्रेजी के सघन शिक्षण की व्यवस्था उनके लिए की जाएगी। इसके बाद पठन/पाठन का एक समान माध्यम हिंदी/अंग्रेजी होगा। गणित और विज्ञान के विषय अंग्रेजी में पढ़ाये जाएंगे। इस योजना के मुख्य उददेश्य इस प्रकार हैं:

- शिक्षा के एक कार्यक्रम विशेष के जरिये राष्ट्रीय एकता और अखंडता को प्रोत्साहन।
- खासकर ग्रामीण और समाज के कमजोर तबके से आने वाले प्रतिभाशाली छात्रों को प्रोत्साहन।
- छात्रों के सवांर्गीण विकास के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा।
- जिला स्तर पर ऊंची गुणवत्ता वाले संस्थान की स्थापना जो आसपास के संस्थानों के लिए उत्कृष्ट उत्प्रेरक मॉडल और गति निर्धारक का कार्य करें।

एचकेपी सिन्हा

मैं अपने अनुभव से कह सकता हूं कि सभी नवोदय विद्यालय सफलतापूर्वक चल रहे हैं और आने वाले दिनों में शिक्षा का भविष्य उज्जवल करने में इसका योगदान सराहा जाएगा।

नवोदय विद्यालय में प्रवेश 13 साल के बच्चों का लिया जाता है। जहां नवोदय विद्यालय अस्तित्व में हैं, उस जिले के छात्र उसी नवोदय विद्यालय में प्रवेश के पात्र होंगे। 75 प्रतिशत सीटें ग्रामीण छात्रों और 25 प्रतिशत सीटें शहरी छात्रों के लिए आरक्षित होती हैं । अनुसूचित जाति/जनजाति के छात्रों के लिए भी प्रावधान किया गया है। नवोदय विद्यालय पूरे देश में फैला हुआ है। इसके 7 क्षेत्रीय कार्यालय हैं जो उस क्षेत्र के नवोदय विद्यालयों का प्रबंधन करते हैं। क्षेत्रीय कार्यालय, पटना, लखनऊ, पुणे, चंडीगढ़, भोपाल, हैदराबाद, जयपुर और शिलांग में हैं। शिलांग क्षेत्रीय कार्यालय सिक्किम सहित उत्तर पूर्व के सभी विद्यालयों का प्रबंधन और संचालन करता है।

उत्तर पूर्व में ये केंद्र मेघालय, मिजोरम, सिक्किम, नगालैंड, त्रिपुरा, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश और असम में हैं। राष्ट्रीय एकता और अखंडता को प्रोत्साहित करने के लिए हिंदी भाषी से गैर हिंदी भाषा राज्यों में छात्रों की आवश्यकतानुसार स्थानांतरण का प्रावधान किया गया है। यह प्रावधान 9वीं कक्षा से दो वर्ष के लिए होगा। इस कार्यक्रम के तहत दक्षिण बिहार और उत्तर प्रदेश के कई छात्र उत्तर पूर्व में पढ़ रहे हैं, इसी प्रकार उत्तर पूर्व के कई छात्र भारत के अन्य राज्यों में स्थानांतरित हुए हैं। यह योजना भली भांति कार्य कर रही है।

नवोदय विद्यालय में अद्यतन टेक्नलॉजी का प्रयोग करते हुए कंप्यूटर शिक्षण की व्यवस्था की गयी है। 1986 की शिक्षा नीति के तहत मुझे सरकार ने देश के सभी जिलों में नेतरहाट की तर्ज पर नवोदय विद्यालय स्थापित करने के लिए नियुक्त किया था। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूं कि ये सभी विद्यालय सफलतापूर्वक चल रहे हैं और आने वाले दिनों में शिक्षा का भविष्य उज्जवल करने में इसका योगदान सराहा जाएगा।

लेखक नेतरहाट विद्यालय के भौतिकी के पूर्व विभागाध्यक्ष और नवोदय विद्यालय समिति, क्षेत्रीय कार्यलय षिलांग, मेघालय के सहायक निदेषक(प्रषासन) रहे हैं।

नेतरहाट श्र

2016 में संपन्न वैश्विक नोबा सम्मेलन से उत्साहित होकर रांची नोबा कार्यकारिणी समिति ने निर्णय किया कि प्रत्येक वर्ष विद्यालय दिवस के उपलक्ष्य में वैश्विक नोबा सम्मेलन का आयोजन किया जाए, क्योंकि यह ऐसा अवसर होगा जिसमें विश्व के समस्त कोने-कोने से पूर्ववर्ती छात्र विद्यालय दिवस में सम्मिलित होने नेतरहाट जाते हैं और वैश्विक स्तर से नेतरहाट जाने का मार्ग रांची होकर ही गुजरता है। क्यों नहीं इस अवसर पर एक ऐसा मंच प्रदान किया जाए, जिसके माध्यम से प्रत्येक वर्ष समस्त विश्व के तमाम पूर्ववर्ती छात्रों, शिक्षकों, शिकेतर कर्मियों और नेतरहाट से जुड़े सभी जनों का समागम हो ? और इसका बीड़ा उठाने का काम किया रांची नोबा ने। इसका नामकरण किया गया ''नेतरहराट श्री माहोत्सव''

नेतरहाट विद्यालय के प्रांगण में विद्यालय की समृद्धि के प्रतीक के रूप में ''नेतरहराट श्री'' की प्रतिमा स्थापित की गई जिसके माध्यम से नेतरहाट विद्यालय की समृद्धि के विभिन्न रूपों को दर्शाया गया है: (1) सांस्कृतिक समृद्धि (2) श्रम समृद्धि (3) उत्पादन समृद्धि (4) वात्सल्य समृद्धि और (5) स्व अर्थात् स्वभिमान की समृद्धि जिसकी अभिव्यक्ति वृहद नेतरहाट परिवार के सभी जनों के माध्यम से होती है, और इन सभी का समागम ही नेतरहाट श्री महोत्सव है।

12 नवंबर 2017 को प्रथम नेतरहाट श्री महोत्सव का सफल आयोजन किया गया और संकल्पना के अनुरूप ही विश्व भर के लोगों का आगमन हुआ। विद्यालय दिवस के अवसर पर 1961 बैच के

सुनी

थ्री चीय

नेत

हिप- हि

कुछ यादगार लम्हे जो नेतरहाट श्री -2017 की यादें ताजा करेंगी। विद्यालय के पूर्व षिक्षक श्रीमान मंगलदेव जी ने नोबा सदस्यों के साथ एक वृक्ष की नींव डाली। दर्शकों ने प्रसिद्ध नृत्यांगना सरोजा वैद्यनाथन के नृत्य का भरपूर आनंद उठाया। नोबा की गविविधियां पूरे साल चलती रहीं। एक फुटबॉल मैच का भी आयोजन किया गया जिसमें नोबा सदस्यों ने जबर्दस्त खिलाड़ी होने का भी परिचय दिया।

ी महोत्सव

ल चंद्र

र्स फॉर
रहाट
प- हुर्रे।

पूर्ववर्ती छात्रों का सामूहिक विद्यालय भ्रमण हुआ और इसी क्रम में सभी सपरिवार इस महोत्सव में सम्मिलित हुए। इस अवसर पर दो सत्रों में कार्यक्रम का आयोजन किया गया। प्रथम सत्र में विचार गोष्ठि का आयोजन किया गया जिसका विषय था ''राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना: राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण'' विषय प्रवेश श्री मित्रेश्वर अग्निमित्र के द्वारा कराया गया और श्री ज्योति भ्रमर तुविद, श्री सुखदेव भगत, श्री मनोज कुमार (वैश्विक नोबा अध्यक्ष), डॉ. अशोक कुमार चौधरी, श्री चन्द्रेश्वर खां (जमशेदपुर) ने अपने विचार व्यक्त किये। इसके साथ ही महिलाओं और बच्चों के लिए भी कार्यक्रम आयोजित किए गए।

द्वितीय सत्र में विश्व प्रसिद्ध नृत्यांगना श्रीमती सरोजा बैधनाथन एवं ग्रुप के कलाकारों द्वारा की गई कार्यक्रम की प्रस्तुति ने दर्शकों मंत्रमुग्ध कर दिया। देखते ही देखते वह समय भी आ गया जब अपने प्रथम ''नेतरहाट श्री महोत्सव -2017'' की सफलता से अभिभूत हम ''नेतरहाट श्री महोत्सव-2018'' का आयोजन कर रहे हैं। दिन-ब-दिन कार्यक्रम का स्वरूप बड़ा होता जाएगा और कार्यक्रम में और निखार आता जाएगा। ऐसी आशा है, बस एक इल्तजा है, इसी तरह से, आपका प्यार और स्नेह हमेशा हमें आशीर्वचन के रूप में मिलता रहे। आपका स्नेह ही हमारा संबल है। कृपया अधिक से अधिक संख्या में भाग लेते रहें ताकि आयोजकों का उत्साह बना रहे और इस कार्यक्रम की संकल्पना साकार हो।

टीई-2

सच्चिदानंद सिंह

मुंबई की बात है, 2032 की. दो बहनें हैं, रमा और शमा, जुड़वाँ किन्तु देखने में एक समान नहीं, रुचियाँ भी अलग अलग। रमा का झुकाव गणित और विज्ञान में था और समय आने पर वह आइआइटी पवई पहुँच गयी। शमा सृजनशील प्रकृति की है, कला और कविता की दीवानी. सेंट ज़ेविअर्स में अंग्रेजी साहित्य में दाखिला लेकर उर्दू शायरी कहने लगी। रमा को गणित के समीकरणों से गहरा लगाव है और शमा को प्रेम की अवधारणा से तीव्र, प्रचंड प्रेम. पर संगीत में दोनों की गहरी रुचि है, संगीत के पूर्ण विस्तार में - ग़ज़ल से ग्रंज या राग से रैप तक।

इलेक्ट्रॉनिक इंजीनियरिंग के अपने अंतिम वर्ष में रमा ने एक वैकल्पिक विषय लिया था पार्टिकल फिज़िक्स। उसके प्राध्यापकों ने उस पेपर को उसके लिए अप्रासंगिक बताते हुए उसे मना किया था। पर रमा वैसी ही है। किनारों का अतिक्रमण उसके स्वभाव में है। वह किसी एक विषय में नहीं रमी रह सकती। इंस्टिट्यूट में एक अंतर्विभागीय प्रोजेक्ट आइंस्टीन के जेनेरल थ्योरी के व्यावहारिक उपयोग पर शोध कर रहा था और रमा उससे भी संबद्ध हो गयी थी।

इस प्रोजेक्ट ने इत्तेफाक से या कहें कुछ दैवी कृपा से, चेतन प्रयास से तो कतई नहीं, एक छोटी सी मशीन विकसित कर ली - टीई2। इसका नाम टाइम इंजिन 2 का लघुरूप है। 2 क्योंकि यह दूसरा प्रारूप है, पहला असफल रहा था। यह छोटी मशीन दो व्यक्तियों को, जिनके मिलकर 155 किलो से कम वजन हों काल की किसी दिशा में, आगे या पीछे, दो सौ वर्षों तक ले जा सकती थी। परियोजना में रमा अकेली महिला काम कर रही थी, उसकी प्रतिबद्धता भी सबसे अधिक थी और तकनीकी दृष्टि से भी वह सबसे अधिक सक्षम मानी जाती थी। स्वाभाविक था कि मशीन की पहली यात्रा के लिए उसे आमंत्रित किया गया। यात्री के रूप में नहीं, कमांडर के रूप में।

इस पर शमा से उसकी रोज बातें होतीं थीं और जब काल-यात्रा का कार्यक्रम बनने लगा तो रमा ने कहा वह अपने यान में 1869 ले जायेगी।

''गांधी जी की जन्म तिथि सम्पुष्ट करनी है?'' किसी ने पूछा।

''नहीं'', रमा ने हँसते हुए कहा, ''ग़ालिब की मृत्यु तिथि भी नहीं। मुझे मुंबई के सेंट ज़ेविअर्स कॉलेज का शिलान्यास देखना है''।

बहुत सोच समझकर रमा ने तय किया था कि वह किसी पारसी भद्र महिला की पोशाक में जायेगी, जिससे शिलान्यास के समय कुछ अटपटा नहीं लगे। शमा ने उसके लिए साड़ी और पूरी बाँह की कुर्ती चुनी, एक पारसी प्रोफ़ेसर से सीखा कि उनदिनों कैसे पहना जाता था और खुद पवई आकर रमा को तैयार किया। रमा का सहयात्री कुलदीप था, एक पंजाबी मुंडा। उसने अपने पहनावे पर कुछ नहीं सोचा था। उसे शॉर्ट्स और टी में देख सभी भडक गए। खोज कर सफ़ेद कुरता और पायजामा लाया गया और एक गोल टोपी जैसी आज भी धार्मिक अवसरों पर पारसी पहनते हैं।

यात्रा प्रारम्भ का समय आ गया। रमा और केडी अपनी अपनी जगह बैठ गए। दोनों के सामने कंप्यूटर के कंसोल थे। उपकरण संचालन में दोनों ने गहन प्रशिक्षण ले रखे थे। परीक्षण के पहले दोनों से इन्डेमनिटी ली गयी थी, उनके परिवार से सहमति भी। सबों को यह स्पष्ट किया गया था कि अपनी पहली लंबी यात्रा पर यह मशीन किसी किस्म का धोखा दे सकती है। जितने प्रयोग किये जा सकते थे सब कर लिये गए थे और सभी से यही निष्कर्ष निकला था कि मशीन पूर्णतः निरापद है। पर रमा, केडी और उनके प्रोफेसर जानते थे कि क़ुदरत की कीमियागिरी का पूरा इल्म इंसान शायद कभी नहीं पा सकता। विज्ञान की प्रगति के पथ पर हर कदम पर अड़चनें आती रहीं हैं और प्रायः बहुत ऊंची कीमत देकर ही हम उन अड़चनों को दूर कर पाए हैं।

मशीन में भारतीय सेना की विशेष रुचि थी। उनके कहने पर इसे भरसक गोपनीय रखने का प्रयास किया गया था; इंस्टिट्यूट के सभी छात्र भी इसके बारे में नहीं जानते थे। किसी पत्रकार को इसकी कोई जानकारी नहीं होने दी गयी थी। यह जरूरी भी था - इस मशीन से किसी युद्ध के शुरू होते ही दो एक दिन पीछे या आगे जा कर युद्ध की दिशा बदल पाना संभव और सरल दिख रहा था। मिलिटरी ऑपरेशंस के डाईरेक्टर जेनेरल, पश्चिमी कमान के लेफ्टिनेंट जेनेरल, डीआरडीओ के प्रमुख सहित सेना, नौसेना और वायुसेना के अनेक उच्च अधिकारी आइआइटी

पवई पहुंचे हुए थे।

यात्रा शुरू हुई। लक्ष्य था 1869 का मुंबई। शमा ने कहा था वह अपने कॉलेज के शिलान्यास के चित्र चाहती थी। रमा ने उसके लिए उपयुक्त तैयारी कर रखी थीः गुजराती साड़ी, पूरी बांह की कुर्ती और चांदी-सोने के कुछ गहने जिनके डिजाइन डेढ़ दो सौ वर्ष पुराने थे। उसे देख सबों ने तालियाँ बजाई, कुछ मित्रों ने आँखें भी मारीं और हँसते हँसते रमा और केडी अपनी यात्रा पर निकल पड़े। टीई 2 को पहले भी चालित किया जा चुका था। एकाध दिन पीछे की यात्रा भी की गयी थी। पर आज क्या होगा कोई नहीं जानता था। शमा के आँसू रुकने का नाम नहीं ले रहे थे। यात्रियों के दिल बेतहाशा धडक रहे थे; कहा नहीं जा सकता कि भय से या उत्तेजना से। दोनों जानते थे कि यात्रा के बाद उनके नाम मानवता के इतिहास में अमिट अक्षरों में लिखे जाएंगे - यदि वे सकुशल वापस आ गए तो। नहीं आने पर भी लोग उनकी हिम्मत की गाथाएं गायेंगे।

रमा सोच रही थी, आखिर स्कॉट दक्षिणी ध्रुव पर एमंडसन के पंहुचने के डेढ़ महीने बाद पहुँचा और वापस नहीं लौट सका लेकिन उसका नाम भी ध्रुवों की खोज की गाथा में अमर है। फिर उसने ऐसी बातों को अपने ज़हन से निकाल कर सामने के कंसोल पर अपना ध्यान केंद्रित किया। कंसोल में महापालिका मार्ग, फोर्ट, मुंबई के अक्षांश और देशांतर दशमलव के बाद छः अंकों तक सही सही डाल दिए गए थे। मशीन की घड़ी एक सीज़ियम अटॉमिक क्लौक थी। उससे अधिक सही समय देने वाली घड़ियाँ उपलब्ध हैं पर यह घड़ी भी तीस करोड़ वर्षों में मात्र एक सेकंड की गलती करती है और महज डेढ़-दो सौ वर्षों की यात्रा के लिए आइआइटी के वैज्ञानिकों ने इसे सर्वथा उपयुक्त माना था।

अगले ही क्षण, अपने प्रोफेसर को थम्स-अप कर, शमा को एक हवाई चुम्बन दे, रमा ने टीई 2 को उसके पूर्व-निर्धारित कालिक और स्थानिक पथ पर एक साथ धकेल दिया। यात्रा में कितना समय लगेगा? समय की सापेक्षिता के सन्दर्भ में यह बात निरर्थक लग सकती है। सिद्धांततः काल-यात्रियों को काल-बोध नहीं रहेगा। पर रमा के प्रोफेसर ने अपनी जानकारी के लिए, अपने रिकॉर्ड के लिए, गणना कर रखी थी। यदि सब ठीक रहा तो उनके समय से करीब डेढ़ घंटे बाद रमा और विवेक उस जगह पहुँच जायेंगे जो आज धोबी तालाब कहलाता है और जहाँ 1869 में फोर्ट के अंदर रहने वाले सभी संभ्रांत परिवारों की चादरें, कमीजें, साडियां और कुर्ते-कुर्तियाँ पत्थरों के पाटों पर निर्ममता से पटकी जातीं थीं। भले यात्रियों को लगे कि वे बस पलक झपकते पहुँच गए हैं।

उस जगह से सेंट ज़ेविअर्स बस कुछ सौ मीटर होगा। यूँ तो टीई 2 में बिजली के मोटर भी थी जो उसे बिना कालिक आयाम में घसीटे बस एक जगह से दूसरी जगह ले जा सकते थे और बैटरी इतनी शक्तिशाली कि 60 कि मी प्रति घंटे पर चार घंटों तक चल सके किन्तु योजना यह थी कि सही देश-काल में पहुँच जाने पर मशीन को कहीं छुपा देना ठीक रहेगा और दोनों यात्री पैदल अपने लक्ष्य की ओर निकल पड़ेंगे। और पलक झपकते ही मशीन बंद भी हो गयी। केडी और रमा दोनों समझ गए कि निर्दिष्ट स्थल-काल तक वे पहुँच गए।

कुछ भी जाना पहचाना नहीं लग रहा था। वह तालाब तो कहीं दिख ही नहीं रहा था। बाग बगीचे थे, दूर कुछ गुम्बद दिख रहे थे। कोई बड़ी बस्ती थी। पृष्ठभूमि से घोड़े, ऊँट और बैलगाड़ियों की मिली जुली आवाज आ रही थी। महानगर में पली बढ़ी रमा उन आवाजों को नहीं पहचान पायी, पंजाब के एक छोटे शहर से आया केडी भी नहीं। नजदीक में कुछ बड़े पेड़ थे, लंबे हरे घास और घनी झाडियाँ भी। केडी ने टीई 2 को उस झुरमुट में छिपाया और दोनों उस जगह को फिर से पहचान पाने के लिए ठीक से देख समझ लेने के बाद एक पगडंडी पर आगे बढ़े। करीब सौ-दो सौ गज बाद वे एक चौडी, कच्ची सड़क पर निकले। आगे एक ऊँट बैठा हुआ दिख रहा था। उसके पास खड़े कुछ लोग बातें कर रहे थे। उनकी नज़र इन दोनों पर पड़ चुकी थी। पहले वे अपने ऊँट के बैठ जाने को लेकर फिक्रमंद थे, अब उनकी बातचीत का केन्द्र ये दो अनजान जीव होगये। रमा को वहीँ रुकने को कह कर केडी उनसे मिलने आगे बढ़ा।

नजदीक आने पर केडी ने उनकी बोली पहचान ली. वे पंजाबी बोल रहे थे। उनकी पंजाबी कुछ अलग थी मगर केडी की समझ में आ जा रही थी। उन लोगों ने भी केडी और रमा को

“यह लाहौर था, 1830-35 का लाहौर; महाराजा रणजीत सिंह ज़िंदा था। तुम्हें उन लोगों ने मुंबई की कोई चकला चलाने वाली समझा जो पंजाबी कुड़ियों को भगा ले जाने के लिए आई थी। जाते-जाते एक ने कहा था कराँची से लड़कियाँ खरीदो, जितने मन चाहे।” थोड़ा हँस कर केडी ने कहा, “चल कराँची चलते हैं।”

पहचान लिया था - पारसी थे, बम्बई या गुजरात से आ रहे होंगे। मगर यहाँ क्यों।

“चकला चलाती होगी बम्बई में, पक्का”, एक ने पूरे आत्मविश्वास से कहा।

“तो यहाँ क्या कर रही है?” अब केडी भी उनकी बात सुन-समझ पा रहा था।

“कुड़ियां खरीदने आई होगी।”

“तो इधर क्यों? उसे अनारकली बाज़ार जाना चाहिए. कहीं जो वह किसी लड़की से बात करती किसी दूसरी जगह दिख गयी तो जिन्दी न बचेगी” ।

केडी उनके नजदीक पहुँच चुका था। हाथ उठा कर उसने सलाम कहा और टूटी फूटी हिंदी में बताया कि वे घूमने निकले थे, उनके घोड़े ने उन्हें गिरा दिया और भाग खड़ा हुआ। “मैं कोई सवारी खोज रहा हूँ, ये औरत काफी थक गयी है।”

वे समझ गए, पंजाबी मिली उर्दू में एक ने बताया, उनका अपना ऊँट चलते चलते थक गया है। उससे अब उठा नहीं जा रहा इसीलिए वे लोग उसके साथ रुके हुए हैं। “पर तुमने जाना कहाँ है?”

बिना रुके केडी ने कहा, “अनारकली बाज़ार”, अभी अभी उसने इस जगह का नाम सुना था।

“देखा, मैंने क्या कहा था!” एक ने पंजाबी में कहा। “देख मैं जानता हूँ तुम बम्बई वाले यहाँ क्या खोजते आये हो”, उसने कुछ अधिक गंभीर स्वर में केडी से बोलना शुरू किया, “तुमने इधर आना ही नहीं था। करांची से जितनी चाहो लड़कियां खरीद लो, कोई कुछ नहीं कहेगा, लाहौर में अगर अनारकली बाज़ार के बाहर इस तरह की बात कहीं की तो महाराजा रणजीत सिंह तेरी खाल में भूसा भरवा देंगे।”

इतना काफी था केडी के लिए। वे लाहौर पहुँच गए थे, महाराजा रणजीत सिंह के समय। उसका इतिहास ज्ञान यूं तो बहुत कमजोर था पर किसी पढ़े लिखे सिक्ख (मौना सिक्ख ही सही) के समान वह भी जानता था कि सिक्खों का अपना राज्य बस पचास साल के लिए रहा और 1839 में महाराजा रणजीत सिंह के जाने के बाद उसके वारिस उस राज्य को नहीं संभाल पाए।

“अगर कोई घोड़ा, ऊँट या बैलगाड़ी मिले तो उस तरफ भेज देना, हम पेड़ों की छाया में बैठ रहे हैं”, इतना कह कर केडी वापस मुड़ चला। थोड़ी तेजी से चलते हुए वह रमा की ओर बढ़ा और दूर से ही अंग्रेजी में उसे अपनी मशीन की तरफ चलने की बात कही। केडी की आवाज में चिंता के पुट थे। रमा समझ गयी और अनायास पीछे मुड़ कर तेजी से भाग चली। ऊँट के पास खड़े लोगों में से एक ने चिल्ला कर कुछ कहा और उनके पीछे आने लगा। अब केडी भी दौड़ने लगा। रमा पहले से दौड़ रही थी; गुजराती साड़ी में दौड़ना आसान नहीं होता लेकिन रमा ने खतरे को सूंघ लिया था। एकाध मिनट में उसने टीई 2 को झुरमुट से निकाल केडी के पास ला रखा और केडी के अंदर घुसते घुसते उसके पीछे दौड़ता आदमी एकदम करीब आ पहुँचा था। “दस साल आगे, कहीं भी, बस यहाँ से निकल चलो”, केडी ने कहा और जब तक उसके पीछे दौड़ते आते आदमी ने अपने हाथ उस छोटी सी अजीब चीज को पकड़ने के लिए बढ़ाये, वह चीज अदृश्य हो चुकी थी, वहाँ कुछ भी नहीं था; उसके हाथ हवा में झूलते रह गए।

“गंतव्य क्या डाला, गंतव्य?” केडी ने पूछा।

“क्या फर्क पड़ता है? धोबी तालाव डालने से तो पता नहीं यह कौन सी जगह पहुँच गए थे।”

“लाहौर था, 1830-35 का लाहौर; महाराजा रणजीत सिंह ज़िंदा था। तुम्हे उन लोगों ने मुंबई की कोई चकला चलाने वाली समझा जो पंजाबी कुड़ियों को भगा ले जाने के लिए आई थी। जाते जाते एक ने कहा था कराँची से लड़कियाँ खरीदो, जितने मन चाहे।” थोड़ा हँस कर केडी ने कहा, “चल कराँची चलते हैं।”

जान बच गयी थी। पहली बार उन्हें लगा काल-यात्रा कितनी खतरनाक हो सकती है। इक्कीसवीं सदी में रह कर चाहे कोई कितना भी पढ़ ले, उन्नीसवीं सदी के भारत की अराजकता की कल्पना नहीं कर सकता। वे वापस जा सकते थे। आइआइटी पवई के कौर्डीनेट्स मशीन में पहले से भरे हुए थे। वापस जाने के लिए गंतव्य और समय कुछ नहीं डालना था। बस एक बटन दबाते ही टीई 2 उन्हें पवई पहुँचा देता। शायद टीई 2 उन्हें सकुशल वापस पहुँचा दे। पर अभी रमा ने बस कुछेक साल आगे का कालिक लक्ष्य रखा था, स्थानिक भी कुछ पूरब और कुछ दक्षिण। टीई 2 अपने नए गंतव्य पर कब का पहुँच भी चुका था।

रमा पहचान गयी सामने बड़ा इमामबाड़ा था, पीछे रूमी

दरवाज़ा यह शहर-ए लखनऊ था, पिछले ही साल रमा और शमा दोनों आयीं थीं यहाँ। उनका यान सड़क पर रुका खड़ा था. उस अजीब सी चीज को ठीक से देख पाने के लिए लोग बाग नज़दीक आने लगे थे। रमा को रेसीडेंसी की याद आई। यदि वे 1857 के पहले लखनऊ में पहुंचे होंगें तो रेसीडेंसी में अभी भी गोरे अफसर रहते होंगे। उनमें शायद कोई काल-यात्रा को समझ सके। यहाँ सड़क पर भिश्ती और साईसों के बीच वैसी बात कोई मतलब नहीं रखती और रेसीडेंसी की सुन ये अनपढ़ लोग शायद कुछ डर भी खाएं।

''रेसीडेंसी का रास्ता बताओ'', रमा ने गर्दन बाहर निकाल कर बम्बइया हिंदी में पूछा। उसका सोचना सही था, रेसीडेंसी की बात सुन देखने वाले ठिठक गए। एक ने आगे बढ़कर सलाम किया और रास्ता बताया; टीई 2 उसके बताए रास्ते पर चल पड़ा।

कुछ ही मिनटों में वे लखनऊ रेसीडेंसी के निकट थे। विशाल आहाता, दरवाजे पर हथियारबंद सैनिक दिन के ढाई बज रहे होंगे। लखनऊ दरबार में बहाल कम्पनी बहादुर के रेजिडेंट की लंबी चौड़ी हवेली एकदम शांत थी। हमारे काल-यात्री नहीं जानते थे किंतु लखनऊ की सांस्कृतिक और नैतिक अवनति उनदिनों अपनी पराकाष्ठा पर थी। तीसरे पहर का समय था, भद्र पुरुष अपने बिस्तरों पर अंगड़ाइयां ले रहे थे; मालिश करने वाले उनके पैर दबा कर उन्हें जगा रहे थे। जो जग गए थे उन्हें उनके खानसामे गर्म गर्म चॉकलेट या कहवा दे रहे थे। उनके हज्जाम शयनकक्ष के बाहर तैयार खड़े थे, किसी पल उन्हें बुलाया जा सकता था। साहबों को बस एक फ़िक्र थी, किसी तरह कल रात की ऐयाशी का खुमार उतरे तो आज रात के व्यभिचार के लिए तैयार हुआ जा सके। एकाध घंटे में, महिलाएं अपने कक्षों में शाम के लिए सजने में व्यस्त हो जाएंगीं। उनका श्रृंगार ऐसा होगा कि उनके रूप रात में, झाड़-फानूसों की कृत्रिम रोशनी में दमकते रहें। हरेक भद्र महिला को तैयार करने में तीन-चार दासियाँ लग जाएंगीं और दो तीन घंटों तक लगी रहेंगीं। इन सब से अनजान, हमारे काल-यात्री द्वारपालों से अंदर जाने की अनुमति मांग रहे थे।

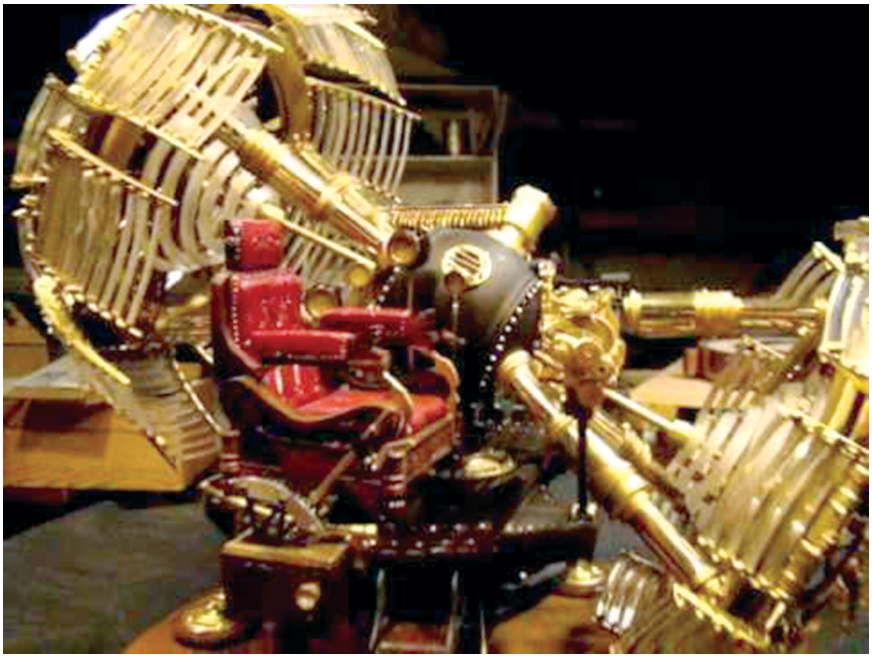

द्वारपाल हिन्दुस्तानी थे, लम्बे-चौड़े, बड़ी बड़ी डरावनी मूँछें उन्होंने पाल रखीं थीं। शायद बलोच थे। उन्होंने ने पहचान लिया था - आगंतुक भी हिन्दुस्तानी हैं, काले आदमी; रेसीडेंसी में बस हिन्दुस्तानी नौकर या दासियों का प्रवेश स्वीकार्य था क्योंकि उनके बिना साहब-मेमसाहबों के कम नहीं चलते। भद्र, प्रतिष्ठित दीखते हिंदुस्तानियों का आना बिलकुल मना था यदि उनके आने की पूर्व सूचना किसी साहब ने न दे रखी हो। पहरेदार उनकी विचित्र सवारी पर चकित थे, उसे छूना चाहते थे, उसके अंदर झांकना भी किंतु अनुशासित थे। अपनी जगहों से हिले बिना उन्होंने आगंतुकों को मना कर दिया। रमा ने उनसे पहले अंग्रेजी में बात की, फिर हिंदी में, फिर केडी ने पंजाबी में भी कुछ कहा। पर किसी की कोई बात का असर नहीं हुआ। कोई एक पहरेदार अंदर जा कर पूछना चाहता था पर तब तक दो अंग्रेज अफसर घोड़ों पर वहाँ पहुंचे।

वे फ़ौज की वर्दी में थे, उनके कपड़ों पर धुल जमी हुई थी। वे कहीं दूर से आ रहे थे। एक घायल था। उसकी बायीं बाँह में चोट लगी थी शायद तीर से या बन्दूक की गोली से ट्यूनिक में छेद दिख रहा था। उसके नीचे सूख चुके खून के दाग उसका चेहरा क्लांत था, रक्तहीन किंतु आँखें चमक रहीं थीं। वे आपस में कुछ बातें कर रहे थे, न बहुत धीरे न जोर से पर स्पष्ट था वे दोनों बहुत उत्तेजित थे। रक्तहीन चेहरे वाले का नाम विल्बर था, उसके साथी का कोल। दोनों हमारे काल यात्रियों की सवारी देख भौंचक थे। अचानक विल्बर की नजर रमा पर पड़ी और वह हिंदी में पूछ बैठा, ''तुम क्या माँगता?''

''हम दूर से आये हैं, बहुत दूर से'', रमा ने अंग्रेजी में कहा, ''थोड़ा समय यहाँ बिता कर, तुम लोगों से बातचीत कर वापस चले जायेंगे''।

''चलो, हमारे साथ अंदर आओ'', विल्बर ने कहा और पहरेदारों को इशारा किया। दरवाजे खुल गए। रमा टीई2 से बाहर निकल गयी। विल्बर का साथी अपने घोड़े से उतर गया। तीनो धीरे धीरे रेसीडेंसी के विशाल आहाते में आगे बढ़े। केडी

अपनी गाड़ी को उनके पीछे ला रहा था। चर्च के पास, जहाँ 1857 के बाद करीब 2000 अंग्रेजों को दफनाया गया था,एक सपाट मैदान था। उस पर कई टेंट गड़े थे। इन्हीं में दो स्विस कॉटेज टेंट विल्बर और कोल के थे। चारों उसकी तरफ बढ़े। आगे आगे विल्बर घोड़े पर जा रहा था, उसके पीछे कोल और रमा पैदल चल रहे थे, और सबसे पीछे केडी, टीई2 में।

''एक डुएल था'', कोल रमा को बता रहा था, पर इतने जोर से कि विल्बर भी सुन सके, ''मैं विल्बर का सेकंड था। हमें दिलकुशा के पीछे वाले बगीचे में मिलना था। जब हम पहुंचे, वे हमारा इन्तजार कर रहे थे। दोनों ने अपने साथ लाये डुएलिंग पिस्टल एक-दूसरे के सेकंड को दिए, मुआयना करने के लिए। तमंचे लेकर दोनों प्रतिद्वंद्वियों ने हाथ मिलाए और अपने घोड़ों को पीछे मोड़ कर बीस कदम चलकर रुक गए। दोनों अच्छे निशानेबाज़ हैं। मैं डरा हुआ था कि दोनों में कोई नहीं बचेगा। मैंने अपनी पिस्टल से गोली चलाकर उन्हें शुरू करने की इजाज़त दी। इत्तेफाक से गोली विल्बर की बायीं बाँह को अंदर की तरफ छीलती निकल गयी। यदि तीन-चार इंच दाहिनी तरफ जाती तो विल्बर के हृदय में घुसती और उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं रहती। चालीस डेग पर, तमंचे से लक्ष्य के चार इंच के करीब वार कर पाना बहुत शानदार निशानेबाजी थी।''

''और विल्बर का प्रतिद्वंद्वी'', रमा ने पूछा, ''उसका क्या हुआ?'' वह बहुत उत्तेजित थी.

''विल्बर के पिस्टल ने काम नहीं किया'', कहते हुए कोल ने अपने घोड़े की जीन से लगे थैले से विल्बर की पिस्टल निकाल रमा की ओर बढ़ा दिया।

बहुत सुन्दर पिस्टल थी। मूठ किसी धातु की थी, अच्छी नक्काशी की हुई, सोने का पानी चढ़ा था। नाल करीब 11 इंच लंबी थी। घोड़ा भी नक्काशीदार था। बस एक गोली के अंदर रखे जाने की जगह थी। यह वाकई डुएलिंग पिस्टल थी। दोनों प्रतिद्वंद्वियों को बस एक मौका मिलना था। केडी अपनी गाड़ी के अंदर से देख रहा था। वह बाहर निकल कर पिस्टल को हाथ में लेना चाहता था, मगर चुप-चाप चलता रहा। थोड़ी देर में वे विल्बर के टेंट पहुँच गए थे। उसका खानसामा दौड़ कर आया और अपने मालिक को घोड़े से उतरने में मदद करने लगा। उसने विल्बर के घाव को अवश्य देख लिया होगा, पूरी कोशिश कर रहा था कि घायल बायीं बाँह को नहीं छुए पर न वह उस तरफ देख रहा था, न उसने कुछ सवाल ही पूछे। ''अच्छा प्रशिक्षण मिला है उसे'', रमा सोच रही थी। टेंट में एक कैंप बेड था, तीन कुर्सियाँ थीं और एक छोटा चौकोर टेबल, जिस पर वे खाना खाते थे, पढ़ते लिखते थे और अपने बाकी काम भी करते थे जिन्हें करने के लिए मेज की जरूरत पड़े। खानसामा तब तक भाग कर कोल के टेंट से दो और कुर्सियाँ लेता आया।

चारो बैठ गए। विल्बर और कोल के लिए व्हिस्की आ गयी। कोल ने रमा और केडी से इशारे में पूछा। दोनों ने मना कर दिया। खानसामा उनके लिए एक बड़े से पीतल की ट्रे पर दो गिलास पानी ले आया। कोल के कहने पर वह एक जग में गर्म पानी लाया और ब्रांडी की बोतल भी। कोल ने विल्बर को ट्यूनिक उतारने में मदद की। रमा की उपस्थिति में विल्बर को कुछ शर्म आ रही थी पर कोल ने कुछ नहीं सुना। पहले घाव को गर्म पानी से धो कर उसने उसके ऊपर थोड़ी ब्रांडी गिराई। विल्बर आँखें मींचे था। एक साफ़, सफेद कपड़े को ब्रांडी में भिगाकर कोल ने घाव को अच्छी तरह बाँध दिया।

इधर केडी ने अबतक पिस्टल अपने हाथ में ले ली थी। उसके पिता फ़ौज में रहे थे और हमेशा उनके पास एक .38 की रिवॉल्वर रही थी। छोटे हथियारों से केडी को बहुत लगाव था। जब सुना कि यह खूबसूरत पिस्टल अब काम नहीं कर रही, केडी ने उसे खोलने की कोशिश की। स्क्रू ड्राईवर मांगने पर खानसामे ने लकड़ी का एक छोटा सा बक्सा ला दिया, जिसमें तरह तरह के औजार रखे थे। देखते ही देखते केडी तमंचे के पुर्जे पुर्जे अलग करने लगा। कोल और विल्बर उसे ध्यान से देख रहे थे।

11 इंच लंबी नाल काफी भारी थी। केडी ने उसमें रखी गोली भी निकाली। गोली 25 ग्राम से कम भारी नहीं होगी। शायद .45 बोर की हो। उसके पहले उस ने नाल से बारूद निकाल दिया था। अब तमंचे के पुर्जों को जोड़ कर उसने देखना शुरू किया। फ्लिंटलॉक प्रक्रिया से गोली दगती थी। घोड़े (हैमर) के आगे एक फ्लिंट लगा था जो लोहे की पट्टी से टकरा कर चिंगारियाँ निकालता था जिनसे उस पट्टी के नीचे रखा बारूद जल उठता था और उससे फिर नाल में गोली के पहले रखे बारूद में विस्फोट होता था। केडी ने ऐसी बंदूकें नहीं देखीं थी मगर वह जानता था उनके बारे में।

''फ्लिंट नहीं घिसा है'', विल्बर ने कहा।

''नहीं घिसा है, मैं देख रहा हूँ'', केडी ने कहा ''चिंगारियाँ निकल रहीं हैं। फिर पट्टी के नीचे रखा बारूद क्यों नहीं जला?''

कोल यह सब देखकर परेशान हो रहा था। उसने केडी के हाथों से तमंचा लेने की कोशिश की, ''लाओ इसे रखते हैं। रेजिमेंट के आर्मरर को देंगे, ठीक करने के लिए।''

''देता हूँ, पहले पट्टी के नीचे रखे बारूद को देख लूँ'', केडी ने कहा।

''तुरंत दो, इसी वक्त'', कोल गुस्से में आ गया था, शायद थोड़ा डरा हुआ भी। तब तक केडी ने पट्टी के नीचे का बारूद

अपने हाथों पर रख कर तमंचा उसे दे दिया।

केडी बारूद को देख-सूंघ रहा था कि कोल उससे बारूद मांगने लगा।

''क्या इसे भी अर्मरर को देना है?'' केडी ने हँसते हुए पूछा।

कोल बहुत असमंजस में था। तबतक केडी ने बम्बइया हिंदी में रमा को कहा, ''इसमें कुछ गड़बड़ लग रही है'' और विल्बर से अंग्रेजी में पूछा, ''ये लोहे की पट्टी के नीचे वाला चार्ज तुमने भरा था?''

''यू बास्टर्ड, मैं तुम्हे ज़िंदा नहीं छोड़ूंगा'', कोल ने अपनी दाहिनी हथेली से केडी की गर्दन पकड़ ली। केडी को निहत्थे लड़ने के काफी अनुभव थे। ''भागो टीई2 की तरफ'', उसने रमा को कहा और कोल की कमर के नीचे दोनों पैरों के बीच, बहुत कस कर लात मारी। कोल लड़खड़ा कर गिर पड़ा। वह कराह रहा था जब केडी अपनी कुर्सी से उठ भाग खड़ा हुआ। विल्बर की ओर देखते हुए उसने कहा, ''कोल ने चार्ज में बालू मिला दिया था, इसी लिए तुम्हारा यह पिस्टल नहीं चला।''

कोल उठ रहा था जबतक रमा ने टीई2 चालू कर लिया था। केडी घुसने वाला था जब कोल ने उसे धर दबोचा। लेकिन तबतक बात विल्बर की समझ में आ गयी थी। उसने पीछे से कोल को खींच लिया और हमारे काल यात्री अपनी वापसी यात्रा पर चल पड़े। पवई जाने के लिए कुछ अक्षांश देशांतर नहीं डालने थे, बस एक स्विच टीई2 को उसके पूर्व निर्धारित लक्ष्य की ओर बढ़ाने के लिए काफी था।

''क्या हुआ? वह पागलों की तरह क्यों करने लगा अचानक?'' रमा ने पूछा।

''कोल था तो विल्बर का सेकंड पर वह चाहता था विल्बर आज नहीं बचे। उसने बारूद में बालू मिला दिया था, बस इसी के चलते विल्बर का तमंचा बेकार हो गया था।''

तबतक वे पवई पहुँच चुके थे।

सच्चिदानंद सिंह (1964-'70) बैच के छात्र हैं। बैंकर रहे श्री सिंह का एक व्यापक सामाजिक नजरिया और वे अभिव्यक्ति के हर माध्यम का उपयोग कुशलता से करते हैं।

SWARAJ
717
17 HP-1 सिलेन्डर
825 XM
25 HP-1 सिलेन्डर
724 XM
26.5 HP-2सिलेन्डर
834 XM
34 HP-3 सिलेन्डर
735 FE
39 HP-3 सिलेन्डर
735 XT
41 HP-3 सिलेन्डर
843 XM
42 HP-4 सिलेन्डर
744 FE
48 HP-3 सिलेन्डर
855 XM
55 HP-3 सिलेन्डर
960 FE
60 HP-3 सिलेन्डर
जल्द आ रहा है।
Booking चालू।
742 FE
45 HP-3 सिलेन्डर
हम किसान हैं
हमसे है इंडिया
सबकी आँखों का तारा है स्वराज ट्रैक्टर हमारा
अधिकृत विक्रेता
तिरुपति ट्रैक्टर्स
बरवा टोली चौक, लोहरदगा
मो. - 9155868888, 8521413937
8969088788

नेतरहाट विद्यालय दिवस के अवसर
पर समस्त छात्रों को
हार्दिक
शुभकामनाएँ
PIAGGIO
apé
हर्षित ऑटोमोबाईल
होण्डा शॉरूम के बगल मे, रिलायन्स पेट्रोल पम्प, लोहरदगा
मो. 7070092603, 7677712650, 9835563211

Mahindra
Rise.
महिंद्रा ट्रैक्टर्स
देश का नं. 1 ट्रैक्टर
महिंद्रा की
टेक्नोलॉजी बेमिसाल,
खेती करें कमाल.
Mahindra
415DI NPB
खेती का बॉस
₹ 6,75,000/-
1.65 मीटर जायरोवेटर के साथ
13-6"x28" पिछले टायर्स
तेल में डुबे हुए ब्रेक्स
जिला का एकमात्र 3S डीलर
Sale • Service • Spars
योजना सीमित
अवधि के लिए
अभी कॉल करें टोल फ्री नंबर 18004256576 पर।
नियम व शर्तें लागू : 1. योजना झारखण्ड डीलरों के सौजन्य से.
2. RTO/Insurance/Finance Charge अतिरिक्त. 3. अन्य कोई योजना शामिल नहीं।
अधिकृत विक्रेता
लोहरदगा ऑटोमोटिव, लोहरदगा
फोन : 8294630838, 8294630839

लैंगिक समानता और हमारी संस्कृति

डा. शोभा पांडेय

उस दिन जैसे ही मैंने अखबार हाथ में लिया एक शीर्षक ने मुझे यह आलेख लिखने को विवश किया। ''सुप्रीम कोर्ट का फैसलाः ''सबरीमला मंदिर में सभी उम्र की महिलाओं को प्रवेश का का ''हक''। ''हक'' शब्द ने मुझे महिलाओं की स्थिति को समझने और उन्हें एक व्यापक आयाम में देखने के लिए प्रेरित किया। सच तो यह है कि महिलाओं को प्रारंभ से ही चाहे वह भारत हो अन्य यूरोपीय देश, उन्हें अपने हक के लिए एक लंबा संघर्ष करना पड़ा। डा. लोहिया का मानना था कि भारत में केवल चार वर्ण ही नहीं है। एक पांचवा वर्ण है जो हजारों वर्षों से शोषित और उत्पीड़ित होता आया है। यह वर्ण है महिलाओं का। ''मार्क्स, गांधी और सोशलिज्म'' में डा. लोहिया ने लिखा है कि संसार में जितने भी प्रकार के अन्याय इस पृथ्वी को विषाक्त कर रहे हैं; उनमें सबसे बड़ा अन्याय नर और नारी के बीच भेद-भाव का है। भारत की तरह पश्चिमी देशों में भी महिलाओं को समस्त राजनीतिक अधिकार बीसवीं सदी में ही मिले।

भारतीय संस्कृति के संदर्भ में देखें तो प्राचीन काल से ही नारियों को महत्व तो बहुत दिया गया, कहा गया, ''*यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः*। नवरात्रि में भी सभी भारतीय, शक्ति की अधिष्ठात्री देवी दुर्गा की पूजा करते हैं और अपनी मनोकामनाएं पूर्ण करना चाहते हैं। आगे के वर्षों में भी नारी को जहां 'केवल श्रद्धा' कहा गया वहीं ममता एवं स्नेह से परिपूर्ण अबला भी कहा गया। परन्तु क्या केवल इन्हीं उपमाओं से नारियों की स्थिति में सुधार हुआ है? नहीं! भारतीय नारियों ने जो सफलताएं अर्जित की हैं वह पुरुषों के सहयोग अपनी प्रतिभा और प्रयास से उसे अर्जित किया है।

अगर हम अवलोकन करें प्राचीन भारतीय संस्कृति का तो उस समय महिलाओं की सामाजिक स्थिति काफी बेहतर थी। सिन्धु घाटी सभ्यता काल में समाज मातृसत्तात्मक था। ऋग्वैदिक काल में भी स्त्रियों की स्थिति सम्मानजनक थी। महिलाएं अपने पति के साथ यज्ञ कार्यों में सम्मिलित होती थीं। वैदिक काल में लोपामुद्राया घोषा, सिकता, अपाला, गार्गी, मैत्रेयी जैसी विदुषी महिलाओं का जिक्र मिलता है। सामान्यतः समाज में एक पत्नी प्रथा का ही प्रचलन था। परंतु उत्तरवैदिक काल आते-आते अंतर्वर्गीय विवाह, बहुविवाह, दहेज प्रथा आदि का प्रचलन हो गया। अब धीरे-धीरे स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आने लगी। पुत्र को परिवार का रक्षक बताया गया। गुप्तकाल में साहित्य और और कला में नारी का आदर्श स्वरूप मिलता है, परंतु व्यावहारिक दृष्टि से उनका स्थान गौण था। पति की मृत्यु के बाद पत्नी को

सती होने के लिए प्रेरित किया जाता था। मुगलकालीन से लेकर राजपूतकालीन समाज में भी सती प्रथा, जौहर, कन्या हत्या, बालविवाह, देवदासी और वेश्यावृति जैसी कुप्रथा ने स्त्रियों की स्थिति को और कमजोर बना दिया। भारत में रजिया जो तुर्क महिला थी, पहली बार दिल्ली के सिंहासन पर बैठी, परंतु महिला होने के कारण उसे भी कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। 19वीं शताब्दी में कुछ समाज सुधारकों के प्रयास और संचार के नये माध्यमों के विकास के बाद सामाजिक रीति-रिवाजों, मूल्य-मान्यताओं से संबंधित विचार-विमर्श और चर्चाओं का स्वरूप भी बदलने लगा। किताबें, अखबार, पत्रिका के प्रकाशन से महिलाएं भी राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक मुद्दों पर अपना विचार रखने लगीं। सर्वप्रथम स्त्री शिक्षा के लिए 1919 में एक तरूण स्त्री सभा की स्थापना की गई। 20वीं सदी से महिलाएं अपने अधिकारों के लिए स्वयं सामने आने लगीं। अब शिक्षा प्राप्त कर महिलाएं चिकित्सक, लेखक और शिक्षक बनने लगीं। लेखक बनी महिलाएं अपने आलोचनात्मक लेखों के माध्यम से समाज की कुरीतियों एवं महिलाओं की स्थिति के बारे में अपनी भावनाएं व्यक्त करने लगीं।

व्यक्तिगत जीवन में मैंने जो महसूस किया है, लैंगिक भेद भाव के कारण कई अधिकार प्राप्त करने से मैं वंचित रही। नेतरहाट विद्यालय के कार्यकाल के दौरान सम्मान तो मिला, परंतु मुझे कई कार्यकलापों से वंचित रखा गया। जैसे टेंडर समिति में न रखा जाना, या अन्य किसी महत्वपूर्ण समिति में न रखा जाना ।

व्यक्तिगत जीवन में मैंने जो महसूस किया है, लैंगिक भेद भाव के कारण कई अधिकार प्राप्त करने से मैं वंचित रही। नेतरहाट विद्यालय के कार्यकाल के दौरान सम्मान तो मिला, परंतु मुझे कई कार्यकलापों से वंचित रखा गया। जैसे टेंडर समिति में न रखा जाना, या अन्य किसी महत्वपूर्ण समिति में न रखा जाना । बहुत सी कार्यालय से संबंधित जानकारियां मैंने नियुक्ति के दौरान झारखण्ड शिक्षा परियोजना में लड़कियों के प्रभारी के रूप में प्राप्त की। पुरुष प्रधान इस विद्यालय में मुझे कई चुनौतियों का सामना पड़ा। मैंने अपने आपको नेतरहाट विद्यालय में अनवरत मेहनत एवं प्रयास से स्थापित किया। इस प्रकार, मैंने अपने कनीय महिला शिक्षिकाओं के लिए एक सुगम पथ बना दिया, ताकि उन्हें मेरी तरह कठिनाइयों का सामना न करना पड़े। पूरे विश्व की जुझारू महिलाओं के जीवन चरित को पढ़कर ऐसा लगता है जिस देश में स्त्रियां आगे बढ़ीं, उसके लिए उन्हें एक लंबा संघर्ष करना पड़ा। अमेरिका में राष्ट्रपति पद के लिए डेमोक्रेटिक पार्टी की उम्मीदवार हिलेरी क्लिंटन की उम्मीदवारी अमेरिका के इतिहास का एक नया पन्ना है, लेकिन वह इस पद पर चुनाव लड़ने वाली पहली महिला नहीं हैं। 1872 में विक्टोरिया क्लेफलिन वुडहल, रिपब्लिकन पार्टी के निवर्तमान राष्ट्रपति चुलिसिस ग्रांट और डेमोक्रेटिक पार्टी के होरेस ग्रीले के विरूद्ध स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ी थीं। वुडहल तब स्वयं वोट नहीं दे सकती थीं, क्योंकि अमेरिका में उस समय महिलाओं को वोट देने का अधिकार नहीं था। यह अधिकार उन्हें 50 वर्षों बाद मिला। लेकिन राष्ट्रपति पद के लिए दावा करके इस नारीवादी महिला ने अमेरिकी इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ दिया। वुडहल का राष्ट्रपति पद का अभियान अपने समय से आगे की बात थी। वुडहल एक बहुत अच्छी वक्ता भी थीं, उनके भाषणों से प्रेस का ध्यान भी उस ओर गया जिन महिला समस्याओं के बारे में पहले कभी ध्यान नहीं दिया गया। चुनाव में वह भले ही हार गयीं परंतु उनके विचार जीत गये।

अगर हम अपने, देश की पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की बात करें, तो अपने कालखंड की वह वह निर्विवाद तौर पर सर्वाधिक असरदार हुक्मरानों में एक थी। यह उन्हीं की इच्छा शक्ति थी कि दुनिया के विरोध के बावजूद उन्होंने बांग्लादेश को एक नये देश के रूप में बनने में मदद की। राजाओं की अंधभक्ति के जमाने में उनका 'प्रिवीपर्स' खत्म कर दिया। बैंकों के साथ बहुत सी संस्थाओं का राष्ट्रीयकरण कर यह जता दिया कि वह किसी भी कारपोरेट या विदेशी ताकत के समक्ष घुटने टेकने वाली नहीं हैं। सोवियत शीर्ष नेता लियोनिद ब्रेझनेव के साथ राजनीतिक और कूटनीतिक सम्पर्क स्थापित कर उन्होंने भारत के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नया मंच तैयार किया। इंदिरा गांधी में आया परिवर्तन आश्चर्यचकित करने वाला था क्योंकि उनके आलोचकों ने कभी उन्हें गूंगी गुड़िया कहा था। इस संदर्भ में लैंग नामक एक विचारक ने लिखा- *टूमारो बिलांग्स टू विमेन*। युगों से शापित को मानवता का वरदान बनने के लिए नारी उद्यत हो चुकी है और विश्वप्रिया के रूप में उभरकर जल्दी ही सामने आने वाली है।

विश्वप्रिया, यानि विश्वपुरुष की निर्मातृ मातृशक्ति, दुर्गा शक्ति के रूप में ।

''तुम त्रिभुवन में या त्रिकाल में जहां कहीं भी हो अंतर
में धैर्य धरो
सरिता समुद्र गिरिवन मेरे व्यवधान नहीं
मैं भूत, भविष्य, वर्तमान की कृत्रिम बाधा से विमुक्त
मैं विश्वप्रिया''

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आये दिन अखबारों में हम लोग समाचार पढ़ते हैं, छोटी बच्चियों के साथ हिंसा, निर्भयाकांड जैसे कई कांड, हर पटल पर महिलाओं का शोषण । 21वीं सदी में महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार के खिलाफ आवाज चारो तरफ से आ रही है। वह निश्चय ही नयी सदी में स्त्री की सकारात्मक भूमिका तय करने के लिए एक जन आंदोलन और संकेत दे रही है। इतिहास गवाह है, विधान निर्माण में कार्यपालिका, विधायिका में जब जब महिलाओं की उपस्थिति बढ़ी तब उनके हित में विधान बने हैं और उन पर क्रियान्वयन हुआ है। आज की परिस्थिति भी बहुत सुधरी नहीं है। महिलाओं के चारों ओर एक आपराधिक माहौल है। वह प्रतिदिन शारीरिक, मानसिक हिंसा, घरेलू हिंसा का शिकार हो रही हैं, सुधार के क्षेत्र में कुछ उपलब्धियां जरूर हुई हैं, परंतु अधिकार के क्षेत्र में अधिक, नहीं। भारतीय महिलाएं देश की आजादी के संघर्ष से सत्ता की भागीदारी तक अपनी पहचान बनाने के लिए कोशिश करती रही हैं। सच्चाई यह है कि आज के संदर्भ में महिला सबलीकरण की बात उस समय तक बेबुनियाद है जब तक कि महिलाओं को स्वयं निर्णय लेने की स्वतंत्रता नहीं मिल जाती। हजारों हजार वर्षों तक समानांतर स्थान देने की नीति पर चलकर भारत ने बहुत कुछ पाया था। महापुरुषों के जीवन इसके साक्षी हैं। उदारता के नये बीज बोकर नारी सबलीकरण को एक सही दिशा दी जा सकती है। तभी समूची व्यवस्था में एक ज़रूरी परिवर्तन आ सकता है। सिर्फ 8 मार्च को महिला दिवस के रूप में मनाना ही पर्याप्त नहीं है। महिला सशक्तिकरण के आंदोलन की दिशा क्या हो, उस पर एक राष्ट्रीय सोच विकसित करने की आवश्यकता है। आखिर कब तक वह हिंसा का शिकार होती रहेंगी? कब तक वह देहज की बलिवेदी पर चढ़ती रहेंगी?

हां यह अवश्य है कि हमारे देश में नारी मुक्ति संघर्ष पश्चिमी नारी मुक्ति आंदोलन से भिन्न है। भारत में आंदोलन की दिशा और महिला स्वतंत्रता, भारतीय परिवेश में निर्धारित हो। महिलाएं उपभोक्तावादी अपसंस्कृति के प्रभाव में नहीं आयें। स्त्रियों को पुरुष के शोषण से न केवल मोर्चा लेना होगा, बल्कि गांधी के सुधारवादी विचारों को लेकर नारी स्वयं अपनी पहचान बनाने का संकल्प लेगी, तभी वह समाज की मूलधारा से जुड़ पायेगी।

अंत में मैं इतना अवश्य कहना चाहूंगी कि पुरुष और स्त्री के सामंजस्य की जो सांस्कृतिक परंपरा हमारे देश की है वह केवल इस देश के लिए नहीं, वरन यह वैश्विक परंपरा है। दुनिया की कोई भी सभ्यता दोनों के सामंजस्य के बिना फल-फूल नहीं सकती। बल्कि हमारी सोच यह होनी चाहिए कि समाज, राज्य या देश की प्रगति के लिए जिस अर्द्धनारीश्वर सत्य को हम भूलने लगे थे, उसे साकार कर हम अपनी प्रगति की दिशा तीव्र करें।

शांति, काम के अधिकार, लैंगिक भेदभाव के विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र ने भी मुहीम चलायी और 1945 में सैनफ्रांसिस्को में एक चार्टर पर हस्ताक्षर किये गये। जिसमें पहली बार लैंगिक समानता को मौलिक अधिकार में शामिल किया गया। 1909 में पहली बार अमेरिका में महिला दिवस मनाया गया। इससे बहुत पहले अमेरिका की एलिजाबेथ मिलर, लूसी स्टोन ने महिला आंदोलन को आगे बढ़ाया। यद्यपि वर्तमान में केन्द्र एवं राज्य सरकारें भी *'बेटी बचाओ, बेटी बढ़ाओ'* जैसी योजनाएं चलाकर लड़कियों की शिक्षा सुनिश्चित कर रही हैं। परंतु कुछ पुरुषों की दृष्टि में महिला को एक वस्तु और भोग्या के रूप में समझा जाता है इस सोच में बदलाव लाना होगा। आज किसी सीता, रेणुका और द्रौपदी के साथ जरूरत है एक अदद अम्बा की जो शिखंडी बनकर भीष्म का तेज खत्म कर दे। एक समरस समाज की कल्पना प्रसाद ने की थीः

नारी तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजत, नग पग तल में
पीयूष स्त्रोत सी बहा करो
जीवन के सुंदर समतल में।

प्रसाद की अंतिम पंक्ति के अनुसार समरस समाज की स्थापना तभी संभव होगी जब पुरूष और स्त्री समान धरातल पर आयेंगे। जब तक नारी अमृत की धारा बनकर पुरुष के समतल जीवन में नहीं बहेगी, तब तक एक सुंदर, समरस एवं प्रगतिशील समाज की कल्पना व्यर्थ ही होगी।

मैं उम्मीद करूंगी कि 21वीं सदी का भारत एक ऐसा पटल प्रदान करे जो स्त्री पुरुष दोनों को एक समान सोच दे, सम्मान दे, तभी देश के लिए उन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा क्योंकि स्त्री पुरूष दोनों ही एक गाड़ी के दो पहिये के समान हैं।

डॉ शोभा पांडेय नेतरहाट विद्यालय की पहली महिला शिक्षक हैं और अभी वहां इतिहास की विभागाध्यक्ष हैं।

मेरी शोध यात्रा और मेरा विद्यालय

नेतरहाट

स्कूल के पुस्तकालय में एक किताब पढी थी, रूसी लेखक मारजौरी कीनन रौलिंग्स की लिखी, *जीवन और शिकार*। लेखक ने रूस की भयावह ठंड में जीवन यापन को ही अपने स्कूल के रूप में प्रस्तुत किया था। वे कहते हैं कि जीवन यापन सबसे पहला स्कूल है तथा जीजिविषा पहली शिक्षक। शायद नेतरहाट विद्यालय ने हमलोंगों के जीवन के साथ यही किया। शायद यही है मेरी उत्कंठा जनित शोधयात्रा का प्रारंभ।

यादों के झरोखों से झांकने का प्रयास मन के तारों को झंकृत कर एक सुखद पवन के झोंके की तरह छू कर निकल जाता है। लेकिन इस प्रयास की सफलता, प्रयास की सत्यता और निष्पक्षता पर निर्भर होती है। स्वयं से निर्दयता के साथ अपने कथ्यों को बता पाना कितना कठिन है, इसका पता प्रयास के वाद ही चलता है । मैं चिकित्सक का कार्य करते करते शोध के क्षेत्र में कैसे आ गया ? इसका अनुभव आज अकस्मात अपनी यादों में अंकित चलचित्र का अवलोकन करते समय हुआ।

सन 1970 में विज्ञान परिषद या साइंस सोसायटी का सचिव बनने का अवसर मुझे तब मिला जब मैंने कुष्ठ रोग सवंधित निबंध पढ़ा । विज्ञान परिषद का सचिव बनना उस समय एक गौरव की बात थी । विज्ञान से प्रेम का सिलसिला शायद उसी समय से चल पड़ा। नेतरहाट से निकलने के पश्चात चिकित्सा विज्ञान की पढाई तक शोध कार्य से प्रेम का यह सिलसिला अनवरत चलता रहा और शायद अनवरत चलता रहेगा।

बिहार राज्य की स्वास्थ्य सेवा के अर्न्तगत ग्रामीण सेवा के दौरान क्षेत्र में अकस्मात खसरा की महामारी ने उग्र रूप धारण कर लिया । उस क्षेत्र का एकमात्र शिशु रोग विशेषज्ञ होने के कारण पूरे क्षेत्र में घूमने के बाद अवलोकन किया कि खसरा की वीमारी 9 माह से नीचे के बच्चों को भी हो रही है जवकि टीकाकरण 9 माह के बाद ही होता था । चिकित्सकीय पाठ्य पुस्तक भी इस तथ्य पर मौन थे । इस प्रश्न ने शोध का रूप ले लिया ।

अपने कॅरियर के शुरुआती दौर में ग्रामीण क्षेत्रों के पदस्थापन का आनंद लेते हुए शोध प्रबंध लिखने का जो प्रयास किया उसने पीएचडी; मेडिसीन का रूप ले लिया । वर्ष 1993 में मैंने अपना शोध प्रबंध प्रस्तुत किया और पीएचडी ;मेडिसीन की उपाधि पटना विश्वविद्यालय से प्राप्त की। इस शोध को महत्व मिला तथा वर्ष 1995-96 से भारत सरकार ने राष्ट्रीय प्रतिरक्षण कार्यक्रम में सशोधन करते हुए आपदा प्रभावित क्षेत्रों में मिजल्स या खसरा टीकाकरण के कालक्रम में संशोधन किया। नेशनल तथा इंटरनेशनल समाचारों की सुर्खियों ने तत्कालीन प्रशासकों का ध्यान आकृष्ट किया और मात्र चालीस वर्ष के युवक के हाथों में राज्य के बदहाल टीकाकरण कार्यक्रम की कमान सौंप दी गई। मेरे मित्रों तथा शुभचिंतकों ने मेरे पदस्थापन को आत्मधाती बताते हुए मेरा मर्सिया तक पढ़ डाला। परंतु आज ऐसा प्रतीत होता है कि यह एक सुखद कैलिडियास्कोपिक अनुभव था, जिसने मेरी जीवन यात्रा को इंद्रधनुषी रंगों से भर दिया।

वर्ष 1990 का दशक टीकाकरण कार्यक्रम के लिए महत्वपूर्ण घटनाओं के लिए जाना जायेगा।

उथलपुथल से ओतप्रोत राजनीति से परे राजनीति के नये किरदारों ने नयी पटकथा लेखन का कार्यक्रम बनाया । तत्कालीन प्रधान मंत्री के जन्मदिवस से एक नये मुख्यमंत्री की राजनीतिक सोच का उद्भव हुआ । कालान्तर से दोंनो के विचार स्वार्थपरक राजनीतिक घोटालों की भेंट चढ़ गये।

बापू के तीन बंदरों की तरह स्वच्छता,टीकारण और शिक्षा , बिहार की नियति बनने लगे । तत्कालीन समय में संयुक्त विहार में मीडिया का प्रसार सिर्फ द इंडियन नेशन, सर्चलाइट और कुछ छुटभैये स्थानीय पत्र पत्रिकाओं तक ही सीमित था,परंतु स्वच्छता, टीकाकरण और शिक्षा, ने बहुत सुर्खियां बटोरीं।

लगभग इसी वक्त मेरा खसरा के टीकाकरण सबंधित शोधप्रबंध प्रकाशित हुआ और मेरे कार्य को पहचान एवं सम्मान मिला । कुछ स्थानों पर शोध पत्र भी प्रस्तुत किया। इसके समानान्तर बिहार राज्य से टीका के औषधियों की समय बाधिता के संबध में खबरें आने के कारण केंन्द्र सरकार ने एक जांच टीम का गठन किया और टीम पटना आई।

चारों ओर से बिहार से सबंधित अपमानजनक समाचार आ रहे थे। लगभग इसी समय मैं बिहार में प्रखंड स्तर पर कुष्ठ रोग निवारण कार्यक्रम में कार्यरत था। नौकरी मेरी जरूरतों की पूर्ति ही नहीं कर रहा था वल्कि मुझे वित्त भी प्रदान कर रहा था परंतु ऊर्जा से भरपूर एक युवक के लिए मानसिक शांति प्रदान नहीं कर पा रहा था। अचानक मेरी पदस्थापना एक सुदूरतम प्रखंड जिसे, बिहार का कालापानी कहा जाता था, अधौरा प्रखंड रोहतास में कर दी गयी। मैंने योगदान दिया जिसकी एक अलग कहानी है। वहां मेरे

डॉ अमर वर्मा

मुझे विस्मित देखकर श्री सक्सेना ने कहा कि आने वाले समय में टीकाकरण कार्यक्रम एक वृहद रूप ले लेगा , लोंगों में स्वीकार्यता भी बढ़ेगी, अगर कुछ गलतियों को हम अनावश्यक महत्व देंगे तो यह कार्यक्रम अपने शैशव काल में ही असामयिक मृत्यु को प्राप्त कर लेगा। मुझे अपने शैक्षणिक और शोध कार्यों के संदर्भ में बहुत दिनों के बाद इस उक्ति का तात्पर्य समझ में आया।

सारे शोध तथा चिकित्सकीय कार्यों पर पूर्ण विराम लग गया। कालान्तर में पता चला कि मेरे पूर्व के कार्यालय के कर्मचारियों ने मेरे अति उत्साह से उत्पन्न कार्य करने की मजबूरी से त्रस्त होकर आपस में चंदा कर मेरा स्थानान्तरण वहां करवा दिया था। उस समय मेरी विदेश जाने की तैयारी पूरी हो चुकी थी।

तभी मेरे टीकाकरण सबंधित शोधपत्र के प्रकाशन के बाद एकाएक मुझे तत्कालीन स्वास्थ्य विभाग के प्रशासक के कार्यालय से बुलावा आया। अनमने भाव से मिलने गया । एकाएक मुझे टीकाकरण विभाग में राज्य प्रतिरक्षण पदाधिकारी का कार्य करने के लिए प्रतिनियुक्त कर दिया गया। और तत्काल दिल्ली से आई भारत सरकार की टीम को साथ देने के लिए प्राधिकृत भी कर दिया गया। नेतरहाटी चुनौतियों को स्वीकार करने की भावना जागी तो अस्वीकार असंभव हो गया।

जांच टीम के प्रभारी भारत सरकार के सचिव श्री के.वी सक्सेना, ख्याति प्राप्त तथा अपने समय के इमानदार पदाधिकारी के रूप में जाने जाते थे। उनके साथ कुछ जिलों का भ्रमण करते समय मुझे आभास हुआ कि टीकाकरण कार्यक्रम के प्रति लोंगों में जागरूकता का अभाव है । चुनौतियां स्पष्ट परिलक्षित थीं।

एक जिले में पहुंचने पर टीकाकरण कार्यक्रम के आकलन के लिए बैठक का आयोजन किया गया और जिला पदाधिकारी के माध्यम से दो घंटों के अंदर सबों को सम्मिलित होने का आदेश दिया गया। एकाएक आदेश और वह भी दिल्ली से आई टीम का, जिसके प्रमुख श्री के.वी. सक्सेना जैसे पदाधिकारी हों, तो अफरा-तफरी का माहौल तो होना ही था

सभा स्थल पर पहुंचते ही श्री सक्सेना ने मुझे टीका भंडार गृह और टीकाकरण स्थल के निरीक्षण का आदेश दिया। उचित प्रशिक्षण के अभाव में जो स्थिति होती है वह यहां भी थी। टीकाकरण गृह के प्रभारी की खोज हुई तो वह अनुपस्थित मिले। अतिउत्साहित टीकाकरण के विषय पर पीएचडी उपाधिप्राप्त चिकित्सक और तथाकथित ज्ञानी के लिए यह स्थिति उनके अहम पर ठेस पहुंचाने वाली थी। थोड़ा क्रोध के साथ मैंने सभी निरीक्षण के विन्दुओं को तकनीकी तौर पर अपने ज्ञान प्रदर्शन के रूप में कलमवध्द किया और उनके समक्ष रख दिया। कभी कभी ज्ञान का अतिरेक सामान्य बुध्दि को कुंठित कर देता है और व्यावहारिक बुध्दि असामान्य ज्ञान में परिर्वितत हो जाती है। मैंने गर्व के साथ वैठक में उपस्थित सज्जनों का निरीक्षण किया और सोचने लगा कि आज पटाखे जरूर फूटंगे।

श्री सक्सेना ने सभी से उनकी समस्यायें पूछीं । उनके सम्भावित निदान के बारे में भी उनसे पूछा। परंतु मेरी तथाकथित ज्ञानगर्भित टिपण्णियों पर कोई भी बात नहीं की। मुझे आश्चर्य हुआ । बैठक समाप्त हुई तो लोगों ने राहत की सांस ली। मैंने उनके हाथों में सुस्पष्ट रूप से लिखे हुए दो पन्नों के नोट्स देखे।

मुझे विस्मित देखकर श्री सक्सेना ने कहा कि आने वाले समय में टीकाकरण कार्यक्रम एक वृहद रूप ले लेगा , लोंगों में स्वीकार्यता भी बढ़ेगी, अगर कुछ गलतियों को हम अनावश्यक महत्व देंगे तो यह कार्यक्रम अपने शैशव काल में ही असामयिक मृत्यु को प्राप्त कर लेगा। मुझे अपने शैक्षणिक और शोध कार्यों के संदर्भ में बहुत दिनों के बाद इस उक्ति का तात्पर्य समझ में आया।

1995 में पूरे राज्य, बिहार, झारखंड सम्मिलित, में पल्स पोलियो कार्यक्रम के लिए राज्य प्रतिरक्षण पदाधिकारी के रूप में पदनामित किया गया और पूरे भारत में पल्स पोलियो कार्यक्रम को कार्यरूप देने वाली टीम का सदस्य बना। 1995 तथा

1996 में नवीन भारत के सफलतम अभियान को अग्रिम पंक्ति से चलाने का अवसर प्राप्त हुआ। कार्यक्रम ने बहुत सारे संस्मरण दिये, शिक्षायें दीं , अनेकों लोगों से मिलने का अवसर दिया, चिकित्सा विज्ञान के अनपढे. पाठों को पढाया, मान दिया, सम्मान दिया परंतु उस पूरी अवधि में सरकार मेरा वेतन नियमित नहीं कर पाई। अपने सारे काम, अपने पारिवारिक कार्यों को दरकिनार करते हुए पूरे वर्ष जो कार्य हम सबने किया, आज वह मुझे भी अचंभित करता है।यहां पर मैं अग्रज नोबा श्री ए.एन.पी सिन्हा, तत्कालीन अपर आयुक्त का स्मरण करना चाहूंगा । उनके उक्त कार्यक्रम के प्रति सर्मपण भाव ने मुझे भी उत्प्रेरित किया। परंतु उनके जैसे कर्मठ व्यक्ति का सदुपयोग सरकार नहीं कर पाई।

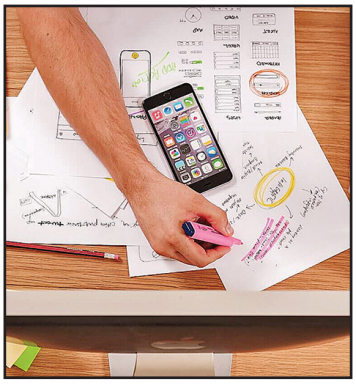

नेतरहाट ने मेरी शोध यात्रा को अनवरत गति प्रदान की जो रुकेगी नहीं, ऐसा प्रतीत होता है। अनावृत सत्य को देखने की उत्कंठा को नेतरहाट ने जन्म दिया है और शायद यह प्रक्रिया जीवन भर चलेगी।

वर्ष 1997 में विश्व स्वास्थ्य संगठन में कार्य करने के लिए चयन के पश्चात पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम में कार्य कर पूरे देश में कार्यक्रम की स्थापना में सहयोग दिया। एशिया एवं दक्षिण पूर्व देशों में कार्य का अनुभव प्राप्त किया। मेरे शोध कार्यों का अनुभव मेरे आगे के शैक्षणिक कार्यों के लिए बहुत ही लाभदायी रहा। धीरे धीरे मेरे जैसे विशुध्द अकादमिक प्राणी के लिए प्रशासनिक कार्यों से परिपूर्ण विश्व स्वास्थ्य संगठन का कार्य तब बोझ लगने लगा ,जब उन्होंने स्थायी विदेश सेवा के लिए मेरा चयन किया।

जिंदगी के दोराहे पर मैंने अकादमिक क्षेत्र का चयन किया और वापस पूर्ण शैक्षक कार्य के लिए राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान रांची में चयन के पश्चात योगदान दिया । राजेन्द्र चिकित्सा महाविद्यालय के शिशु रोग विभाग में योगदान के बाद मेरा सामना मलेरिया के भयावह रूप से हुआ। रोज रोज अनेकों शिशुओं को मौत के गाल में जाते हुए देखना मानसिक रूप से कष्टकर होता जा रहा था ।

तभी एक रिसर्च प्रोजेक्ट के अर्न्तगत नेशनल इंस्टिच्यूट आफ मलेरियल रिसर्च के अर्न्तगत काम्पलिकेटेड मलेरिया पर नयी प्रक्रिया को इंडो अमेरिकन अकादमी ऑफ पीडियाट्रिक्स के अधिवेशन में प्रस्तुत करने का अवसर मिला और इसको मानक रूप में स्थापित करने का श्रेय मिला। राष्ट्रीय स्तर पर यह उपलब्धि उत्साहवर्धक थी और कुछ ही दिनों में मलेरिया जनित मृत्युदर में 50 प्रतिशत की कमी आ गई।

16 मई 2016 को भारत सरकार, राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान रांची, नेशनल इंस्टिच्यूट ऑफ मलेरियल रिसर्च, भारतीय अनुसंधान परिषद, नयी दिल्ली के बीच पहली बार शोध सबंधित करार मेरे नेतृत्व में हुआ ।

एक अन्य शोध कार्य में झारखंड राज्य में जेनेटिक बीमारियों का अनुपात अन्य राज्यों से ज्यादा पाया गया। इसके आधार पर राष्ट्रीय स्तर पर परियोजना का निर्माण किया तदनुसार आज इन शिशुओं का इलाज राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान,रांची में हो रहा है।

रिम्स में कार्य करते हुए मेरी ने टीम मलेरिया की दो नयी दवाओं पर शोध किया और हर्ष का विषय है कि दोंनों दवा कंपनियों के द्वारा खरीद ली गईं तथा आज भारतीय वाजार में उपलब्ध हैं।

इसके अतिरिक्त मुझे विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनिसेफ, विश्व वैंक तथा अनुवंशिक शोध संस्थानों के साथ कार्य करने का मौका मिला।

इसके अतिरिक्त अनेकों छोटे बड़े सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थानों के साथ शोध कार्य किया तथा मरीजों के कष्ट निवारण में जो असीम सुख का अनुभव प्राप्त हुआ उसका वर्णन करना असंभव है।

अभी तत्काल एक अन्य नयी मलेरिया रोधी दवा पर शोध करना प्रारंभ किया है। आशा है कि अगले वर्ष तक कुछ नवीन परिणाम प्राप्त होगा। डिपार्टमेंट आफ बायोटेकनोलॉजी के साथ थैलीसीमिया और सीकल सेल एनीमिया के लिए शोध कार्यक्रम पारित हो चुका है। जल्द ही कार्य प्रारंभ होगा।

नेतरहाट ने मेरी शोध यात्रा को अनवरत गति प्रदान की जो रुकेगी नहीं, ऐसा प्रतीत होता है। अनावृत सत्य को देखने की उत्कंठा को नेतरहाट ने जन्म दिया है और शायद यह प्रक्रिया जीवन भर चलेगी। नेतरहाट विद्यालय की स्थापना का लक्ष्य मेरी शोध यात्रा की परिणति हो ईश्वर से यही कामना है।

डॉ वर्मा (1966-'72) बैच के छात्र हैं और कई अंतरराष्ट्रीय संस्थानों से जुड़ाव रखते हुए राजेंद्र आयुर्विज्ञान संस्थान रांची में अध्यापन और अनुसंधान कर रहे हैं।

ऐसा क्यों होता है?

रामचंद्र चौधरी

आज जब हमने गूगल पर हिंदी में नोबा लिखा तो सबसे पहले ये मिलाः नेतरहाट पूर्ववर्ती छात्र संगठन (नोबा) का ग्लोबल मीट 12 एवं 13 नवंबर 2016 नवंबर में होगा। 60 वर्षों से नेतरहाट विद्यालय के विद्यार्थी विभिन्न क्षेत्र में सफल हो रहे हैं। विद्यालय से पास आउट लगभग 800 पूर्ववर्ती विद्यार्थी सेवानिवृत्त हो चुके हैं। दो दिनों तक चलने वाले इस कार्यक्रम में झारखंड के विभिन्न मॉडल स्कूल में सुधार की संभावनाओं पर परिचर्चा होगी। राज्य में शिक्षा के क्षेत्र में और सुधार कैसे किया जाए, इस पर विचार होगा। निकले निष्कर्ष को झारखंड सरकार को सौंपा जायेगा।

इसके लगभग पाँच महीने बाद इस मीटिंग का एक एमओएम आया था नोबा के विभिन्न व्हाट्सएप ग्रुप्स में जिसमें ग्लोबल आयोजन-2018 के लिए कई समितियों की सूची थी।

एमओएम आने से पहले ही नोबा दिल्ली एनसीआर में यह चर्चा प्रारंभ हो गयी थी कि 12018 का ग्लोबल नोबा आयोजन दिल्ली में होगा। कई तरफ से प्रयास प्रारंभ हुए होंगे, एक प्रयास में मुझसे भी सहयोग मांगा गया। तब तक मैं दिल्ली नोबा मिलन में सम्मिलित होने के अलावा किसी भी और तरह से सक्रिय नहीं था। जनवरी 2017 में बयासी गाँव (1982 बैच का गाँव) का ग्लोबल मिलन हुआ गुरुग्राम में जिसमे मैं बहुत ज्यादा सक्रिय था। शायद उस सक्रियता की खबर इधर-उधर घूमते हुए दिल्ली नोबा के शुभचिंतकों तक पहुँच गयी।

खैर, मैंने अपनी तरफ से अधिकतम सहयोग करते हुए 2017के होली मिलन में बंधुओं के जुटाने में अति-सक्रिय भूमिका निभायी; २०१७ नवंबर में दिल्ली नोबा का सचिव बन गया, 2018 होली मिलन आते -आते मेरा ट्रान्सफर हो गया, आजकल गौरीचक-पटना में हूँ।

2016 ग्लोबल मिलन के एमओएम के आने के बाद मैंने पता लगाने की कोशिश की कि आखिर 2018 ग्लोबल मिलन होना किस शहर में है? 2018 ग्लोबल मिलन आयोजन समिति के अध्यक्ष एवं सचिव जी से वार्ता के बाद कुछ समझ नहीं आया कि ये चक्कर क्या है? रांची वालों ने कहा कि रांची में होगा, दिल्ली वाले बोले कि दिल्ली में होगा, पटना वालों ने कहा कि संख्या के हिसाब से पटना नोबा ही सबसे बड़ा नोबा है, अतः ग्लोबल मिलन 2018 पटना में होना चाहिए। आयोजन समिति के अध्यक्ष एवं सचिव जी का कहना था कि जो नोबा यूनिट आगे आयेंगे, वहीं हो जाएगा। लेकिन अपनी अपनी मज़बूत दावेदारी दिखाने के बाद भी कोई यूनिट आगे नहीं आया और ग्लोबल मिलन 2018 नहीं हो पाया। अब सुनने में आ रहा है कि 2020 में हो सकता है, कहाँ? कब? नहीं मालूम।

ऐसा क्यों होता है? विद्यालय के पूर्ववर्ती छात्र सिर्फ भारत ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अपने अपने कार्यक्षेत्र में झंडे गाड़ चुके हैं, गाड़ रहे हैं और गाड़ते रहेंगे। फिर उन्हीं पूर्ववर्ती छात्रों का संगठन अपने ही घर में, अपने ही समाज में, अपने ही राज्य में, अपने ही देश में सामूहिक रूप से झंडे क्यों नहीं गाड़ पाता? इसके कारणों पर चर्चा क्यों नहीं होती?

आज लगभग साढ़े तीन हज़ार पूर्ववर्ती छात्रों का समुदाय है जो सन 1954 से सन 2000 के बीच विद्यालय गये थे और सन 1960 से सन 2005 के बीच पढ़कर विद्यालय से निकल चुके हैं। 2005 के बाद निकलने वाले ज्यादातर अभी सेटल होने की प्रक्रिया में होंगे।

इन साढ़े तीन हज़ार पूर्ववर्ती छात्रों में लगभग एक हज़ार 60 की उम्र पार कर चुके हैं, लगभग डेढ़ हज़ार 40 से 60 वर्ष के बीच हैं और लगभग एक हज़ार 30 से 40 वर्ष के बीच हैं। द्विपक्षीय मिलन में बहुत कम लोग ऐसे हैं जो एक दूसरे से मिलकर खुश न होते हों, संतुष्ट न महसूस करते हों। फिर क्या कारण है कि हमलोग सम्मिलित रूप से कुछ खास कर नहीं पाते? देश, राज्य, समाज की बात तो दूर; हम आजतक अपने हाटीयन समाज के लिए भी ऐसी कुछ स्थायी व्यवस्था नहीं कर पाये हैं जो विवादों, निहित स्वार्थों वगैरह से परे हो।

कोई भी पूर्ववर्ती छात्र संगठन एक परिवार की तरह नहीं होता। परिवार के सदस्य, साथ रहते हैं, दूर रहते हुए भी मिलते जुलते रहते हैं, इसलिए मज़बूत भावनाओं द्वारा जुड़े रहते हैं। हमारे बीच भी एक बैच के लोगों के बीच भावनात्मक जुड़ाव बेहतर रहता है क्योंकि वे पांच बरस तक साथ रहे हैं, साथ खेले हैं, साथ बढे हैं। एक आश्रम के जो लोग साथ रहे हैं उनमे भी भावनात्मक जुड़ाव बेहतर रहता है। लेकिन पूरे संगठन में एक कॉमन धागा सिर्फ नेतरहाट का नाम है। यह धागा बहुत ही नाजुक है। हमें इस धागे से आशाएं बहुत हैं। थोड़ी सी भी निराशा मिलते ही यह धागा टूट जाता है।

जब परिवार का आकार बढ़ता है, पीढ़ियाँ बढ़ती हैं तो समस्याएँ बढ़ती हैं, सामंजस्य मुश्किल होता जाता है और परिवार टूटने का

खतरा बढ़ने लगता है। आज हमारा नोबा भी उसी दौर से गुज़र रहा है।

पहली पीढ़ी के एक हज़ार लोग अनुभव और संस्कारों की दुहाई दे रहे हैं, दूसरी पीढ़ी के डेढ़ हज़ार लोग अनुभव और उम्र की दुहाई दे रहे हैं, तीसरी पीढ़ी के एक हज़ार लोग खुले विचारों की दुहाई दे रहे हैं। जनरेशन गैप बढ़ता जा रहा है। व्हाट्सएप ने लोगों को मुखरता प्रदान की है। कुछ इसका सही फायदा ले रहे हैं, कुछ इसका गलत उपयोग कर रहे हैं। कुछ निहित स्वार्थ अपने रोटियां सेंकने के चक्कर में हैं। कभी कनीय बंधुओं के सक्रिय होने से कुछ वरीय बंधुओं की भावना आहत हो जाती हैं। कभी कनीय बंधु वरीय बन्धु के भावनात्मक दोहन से आहत हो जाते हैं। खुलेआम लिखने वाले लोगों की संख्या बहुत कम है लेकिन मौखिक वार्तालाप में इस तरह की बातें अक्सर आती रहती हैं।

व्यक्तिगत स्तर पर निहित स्वार्थों के लिए हाटीयन बन्धुत्व का सदुपयोग जायज़ हो सकता है लेकिन संस्थागत स्तर पर निहित व्यक्तिगत स्वार्थों के लिए नोबा प्लेटफार्म का प्रत्यक्ष, परोक्ष या छद्मवेशी उपयोग के प्रयासों का भरपूर विरोध आवश्यक है।

आवश्यकता है सामंजस्य को बढ़ाने की, निहित स्वार्थों को पीछे धकेलने की, पहली पीढ़ी के मार्गदर्शन की, दूसरी पीढ़ी के सक्रिय लोग स्टीयरिंग संभालें और तीसरी पीढ़ी के सक्रिय लोग गाड़ी को धक्का लगाएं तो नोबा की गाड़ी फिर से रफ़्तार पकड़ सकती है। किसी को भी पकड़कर अध्यक्ष, सचिव या संयुक्त सचिव बना देने से बात नहीं बनने वाली। दूसरी पीढ़ी के लोगों को स्वयं सक्रिय होकर आगे आना पड़ेगा। अन्यथा बातें चलती रहेंगी, समय निकलता रहेगा, हम बिखरते रहेंगे।

लेखक (1982-'89) के बैच के छात्र हैं और इस समय भारतीय पावरग्रिड कारपोरेशन गौरीचक, बिहार स्थित इकाई में महाप्रबंधक के रूप में सेवा दे रहे हैं।

मेरी समझ से...

एक बात जो अक्सर देखने में आती है वह है विचारों की अभिव्यक्ति बनाम वरीय-कनीय आदर-स्नेह संतुलन. कभी विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति के दौरान वरीय-कनीय आदर-स्नेह संतुलन गड़बड़ा जाता है तो कभी वरीय-कनीय आदर-स्नेह संतुलन के चक्कर में अभिव्यक्ति का गला दब जाता है. मेरी छोटी सी समझ से समस्या ये है :

- नेतरहाट से निकलने के बाद नेतरहाट की अच्छी यादों के साथ नेतरहाट की बुरी यादों को भी हम ढोते रहते हैं जिसके कारण कई बार कटुता का माहौल बन जाता है।
- नेतरहाट से निकलने के वर्षों बाद भी हम कनीय बंधुओं से वैसे ही भीगी बिल्ली वाले व्यवहार की अपेक्षा रखते हैं जैसी विद्यालय परिसर में रखते थे।
- सभी पूर्ववर्ती छात्र वयस्क होते हैं, पिता होते हैं, अपने कार्यस्थल पर मेनेजर होते हैं लेकिन नोबा संगठन में वरीय और अथवा कनीय होते हैं। उनसे हर बात पर जी हाँ, जी साहेब, जी सर की उम्मीद रखना, उम्मीद पूरी नहीं होने पर दुखी या आक्रोशित होना, किसी भी तरह उचित नहीं हैं।
- एक ही बैच के कई छात्र नेतरहाट से निकलने के बाद अलग अलग क्षेत्रों में प्रगति पाते हैं. अक्सर कई लोग कहते सुने जाते हैं कि अरे फलनमा अभी बड़का आदमी बन गया है, हाट में तो कोई पूछता नहीं था। इस तरह की भावनाएं एवं उद्गार भी हमारे भाईचारे पर काफी दुष्प्रभाव डालते हैं।
- कई कार्यालयों में वरीय-कनीय संतुलन पूरी तरह उलट जाता है जब कनीय छात्र ऊँची कुर्सी पर होता है. ऐसी परिस्थिति में कभी कभार वरीय छात्र कार्यालय में भी कनीय को कनीय ही समझते रहते हैं।
- कुछ लोग सिर्फ उम्र की दुहाई देकर प्रतिष्ठा ढूँढते रहते हैं। मैं 48 बरस का हूँ। अगर मैं ये समझ लूं कि अपने 47, 39, 29 वर्षीय कनीय बंधु से इज्ज़त पाना मेरा मौलिक अधिकार है तो ये मेरी बहुत बड़ी गलतफहमी होगी।
- व्यक्तिगत स्तर पर निहित स्वार्थों के लिए हाटीयन बन्धुत्व का सदुपयोग जायज़ हो सकता है लेकिन संस्थागत स्तर पर निहित व्यक्तिगत स्वार्थों के लिए नोबा प्लेटफार्म का प्रत्यक्ष, परोक्ष या छद्मवेशी उपयोग के प्रयासों का भरपूर विरोध आवश्यक है।

चादर और चार-दीवारी

फ़हमीदा रियाज

प्रख्यात पाकिस्तानी शायरा फहमीदा रियाज अपनी बेबाकी और जुझारूपन के कारण जितना विवादों और चर्चाओं में रहीं, उतनी ही संजीदगी से अपनी रचनाशीलता में जुटी रहीं। पाकिस्तान का निजाम उनसे खार खाए रहता तो भारत, खासतौर से दिल्ली उनके दिल में बसती, उन्हें घर जैसी लगती। वे पाकिस्तान से सवाल करतीं, भारत के मसले उन्हें बेचैन करते। उनका जाना भारतीय उपमहाद्वीप की एक मुखर आवाज का खो जाना है।

अस्सी के दशक में लिखी गई यही वह नज्म 'चादर और चार-दीवारी' है, जिस पर जनरल जिया-उल हक ने फहमीदा रियाज को देश निकाला दे दिया था और तब भारत ने उन्हें पनाह दी थी। उनका मानना था कि पाकिस्तान के हालात जो भी हों, भारत में न सिर्फ महिलाओं, बल्कि हर जमात के लोगों को खुली हवा में सांस लेते देखना सुखद लगता है। यह नज्म वहां की महिलाओं की दुश्वारियों का बयान करती है।

• • • • • • • • • • • • • • • • •

हुज़ूर मैं इस सियाह चादर का क्या करूँगी
ये आप क्यूँ मुझ को बख़्शते हैं ब-सद इनायत
न सोग में हूँ कि उस को ओढ़ूँ
ग़म-ओ-अलम ख़ल्क़ को दिखाऊँ
न रोग हूँ मैं कि इस की तारीकियों में ख़िफ़्फ़त से डूब जाऊँ
न मैं गुनाहगार हूँ न मुजरिम
कि इस स्याही की मेहर अपनी जबीं पे हर हाल में लगाऊँ
अगर न गुस्ताख़ मुझ को समझें
अगर मैं जाँ की अमान पाऊँ
तो दस्त-बस्ता करूँ गुज़ारिश
कि बंदा-परवर
हुज़ूर के हुजरा-ए-मुअत्तर में एक लाशा पड़ा हुआ है
न जाने कब का गला सड़ा है
ये आप से रहम चाहता है
हुज़ूर इतना करम तो कीजे
सियाह चादर मुझे न दीजिए
सियाह चादर से अपने हुजरे की बे-कफ़न लाश ढाँप दीजिए
कि उस से फूटी है जो उफ़ूनत
वो कूचे कूचे में हाँफती है
वो सर पटकती है चौखटों पर
बरहनगी तन की ढाँपती है
सुनें ज़रा दिल-ख़राश चीख़ें
बना रही हैं अजब हयूले
जो चादरों में भी हैं बरहना
ये कौन हैं जानते तो होंगे
हुज़ूर पहचानते तो होंगे
ये लौंडियाँ हैं
कि यर्ग़माली हलाल शब-भर रहे हैं
दम-ए-सुब्ह दर-ब-दर हैं
हुज़ूर के नुतफ़े को मुबारक के निस्फ़ विर्सा से बे-मोह्लतबर हैं
ये बीबियाँ हैं
कि ज़ौजगी का ख़िराज देने
क़तार-अंदर-क़तार बारी की मुंतज़िर हैं
ये बच्चियाँ हैं
कि जिन के सर पर फिरा जो हज़रत का दस्त-ए-शफ़क़त
तो कम-सिनी के लहू से रीश-ए-सपेद रंगीन हो गई है
हुज़ूर के हजला-ए-मोअत्तर में ज़िंदगी ख़ून रो गई है
पड़ा हुआ है जहाँ ये लाशा
तवील सदियों से क़त्ल-ए-इंसानियत का ये ख़ूँ-चकाँ तमाशा
अब इस तमाशा को ख़त्म कीजे
हुज़ूर अब इस को ढाँप दीजिए
सियाह चादर तो बन चुकी है मिरी नहीं आप की ज़रूरत
कि इस ज़मीं पर वजूद मेरा नहीं फ़क़त इक निशान-ए-शहवत
हयात की शाह-राह पर जगमगा रही है मिरी ज़ेहानत
ज़मीन के रुख़ पर जो है पसीना तो झिलमिलाती है मेरी मेहनत
ये चार-दीवारियाँ ये चादर गली सड़ी लाश को मुबारक
खुली फ़ज़ाओं में बादबाँ खोल कर बढ़ेगा मिरा सफ़ीना
मैं आदम-ए-नौ की हम-सफ़र हूँ
कि जिस ने जीती मिरी भरोसा-भरी रिफ़ाक़त

कैसे करें गांधी को पुनर्जीवित

अक्टूबर महीने में महात्मा गांधी के 150वें जन्म दिवस के उपलक्ष्य में मनाए जाने वाले साल भर लम्बे समारोह की शुरुआत हो गयी । यह चिंतन का समय है और मैं आपका एक गांधी टेस्ट लेना चाहूंगी। जहां तक उनके सबसे पसंदीदा आदर्श अहिंसा की बात है, हालात बुरे हैं। आज हम हर चीज में हिंसा देख सकते हैं, हमारे शब्दों से लेकर सामाजिक आचरण व प्रकृति से हमारे रिश्ते तक में। हमारी असहिष्णुता काबू से बाहर हो चुकी है। इस मामले में हमारा स्कोर जीरो-माइनस का है।

फिर बात आती है विकास की। गांधी अंग्रेजों को भारत से भगाने के अलावा भी कुछ चाहते थे। उनका ध्यान आने वाले समय पर था। वे भविष्य के बारे में सोचते व लिखते भी थे। और इसी क्रम में उन्होंने हमारे कर्तव्यों की एक अलग ही अवधारणा बना डाली। उनकी विचारधारा कार्ल मार्क्स और ऐडम स्मिथ की विचारधारा के लिए एक विकल्प थी(अभी भी है)। यहां भी हमारा स्कोर जीरो ही है, संभवतः थोड़ा अधिक। गांधी आज भी अपने विचारों की प्रबल शक्ति की बदौलत प्रासंगिक हैं, इसलिए नहीं कि हमने उन विचारों को व्यवहार में बदला है।

यह सत्य है कि गांधी के खुद के अनुयायियों ने अपने कर्मों से उनकी हत्या की। वे आश्रमों में रहने लगे और गांधी के विचारों को बंद जगहों में ले गए। उन्होंने दुनिया से नाता तोड़कर गांधीवाद को पुराने जमाने का (रेट्रो) बना दिया। जबकि इसके उलट गांधी स्वयं आश्रम में रहने और उसे एक प्रतीक के रूप में पसंद करने के बावजूद बाहरी दुनिया से संपर्क में थे। दरअसल हमने उन्हें एक संकरा, आध्यात्मिक आइकन बना दिया है जबकि गांधी का एक भरा-पूरा राजनैतिक जीवन रहा है। उनमें बिना एक कदम चले लाखों को चलायमान बनाने की क्षमता थी। आज गांधी के विचारों में जो सबसे ज्यादा प्रचलित है, वह है खादी। इसका फैशन वापस आ गया है। लेकिन गांधी ने खादी के प्रयोग पर जोर क्यों दिया, इसकी हमें शायद ही जानकारी हो। गांधी ने अंग्रेजों और औद्योगीकरण, दोनों ही से आजादी पाने के लिए खादी का इस्तेमाल एक अस्त्र के रूप में किया।

उनके लिए खादी केवल रोजगार या जनता के लिए न होकर, जनता की संपत्ति थी। उनके लिए खादी का मतलब कपास के पेड़ का एक बीज था, जिसे कई लोग मिलकर कातते हैं। अंग्रेज कपास की जो किस्म भारत के खेतों में लाए थे, उसकी कताई लंकाशायर की मशीनों में ही होती थी। अतः खादी का संबंध रोजगार सृजन से भी था और यह रोजगार जनता को मिलता, मशीनों को नहीं। गांधी के लिए खादी का उद्देश्य स्थानीकरण था न कि वैश्वीकरण। गांधी द्वारा चुनी गई कपास की यह किस्म देसी

गांधी पुराने नहीं पड़े हैं, हम उनके विचारों को व्यवहार में बदलने की क्षमता खो चुके हैं

सुनीता नारायण

यही कारण है कि गांधी आज भी प्रासंगिक हैं। पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों ही बेरोजगारी और पर्यावरण के खतरों का समाधान ढूंढने में विफल रहे हैं।

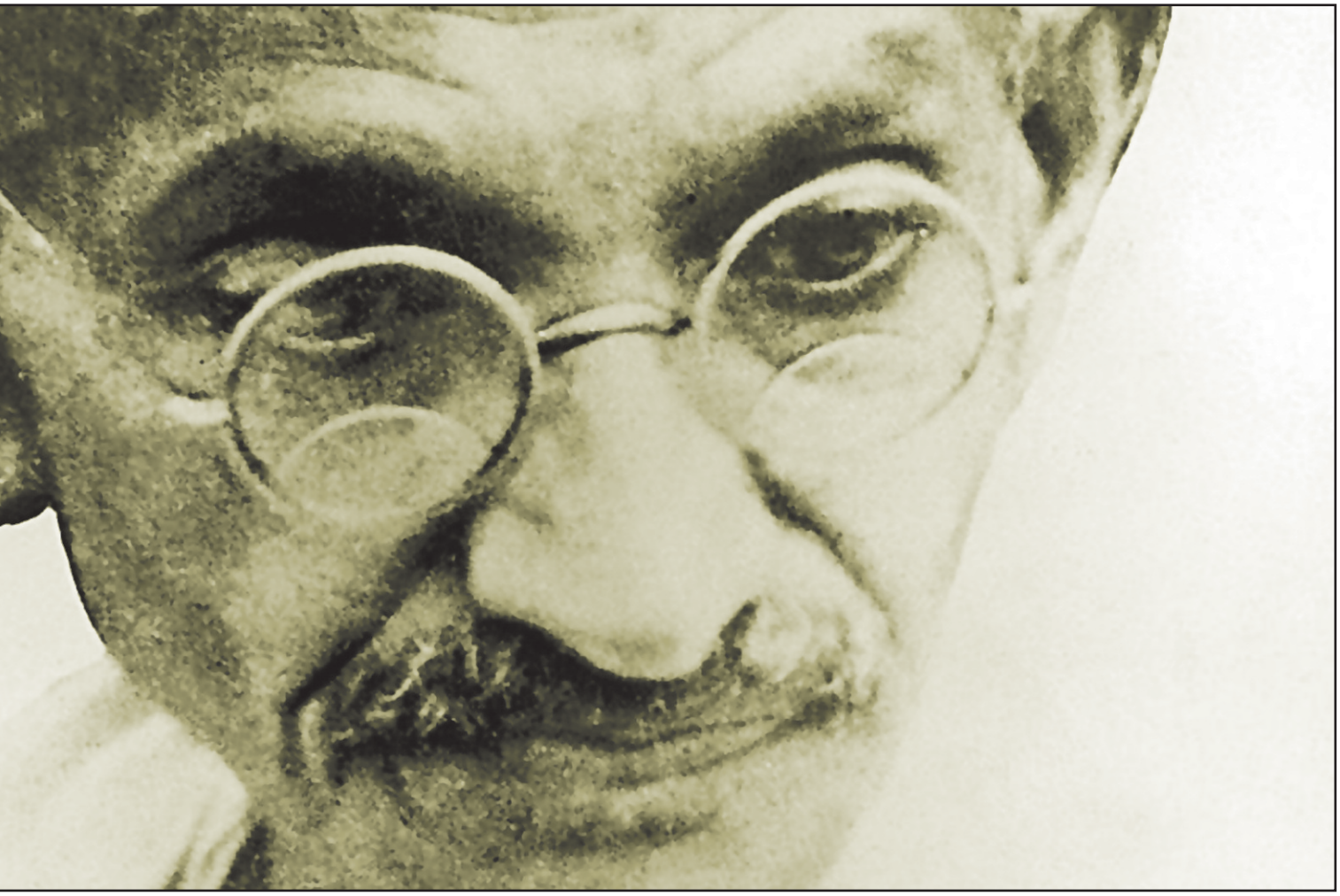

थी। इसमें पानी कम लगता और इसकी कीट प्रतिरोधी क्षमता भी अधिक थी। देश का मौसम भी इसके अनुकूल होता। किसानों को उच्च निवेश मूल्य और फसल के बर्बाद होने के डर से आत्महत्या नहीं करनी पड़ती। लेकिन यह सब तब होता जब हम इस मॉडल के अनुसार काम करते। यही कारण है कि गांधी आज भी प्रासंगिक हैं। पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों ही बेरोजगारी और पर्यावरण के खतरों का समाधान ढूंढने में विफल रहे हैं। स्मिथ की दुनिया हमें यांत्रिकीकरण की ओर ले जा रही है, इस उम्मीद में कि उत्पादकता में वृद्धि से रोजगार मिलेंगे और कौशल का विकास होगा। मार्क्स की दुनिया अब भी औपचारिक उद्योगों और ट्रेड यूनियनों में अटकी पड़ी है। वे यह समझ नहीं पा रहे कि आज रोजगार की दुनिया पर किस्म-किस्म के उद्यमियों का बोलबाला है। उनका विकास का मॉडल उनके वैचारिक विरोधियों, जिनसे वे घृणा करते हैं, से कुछ खास अलग नहीं है। जहां बात वातावरण की आती है, दोनों ही मॉडल अपने-अपने विकास के तरीकों की वजह से विश्व को जलवायु परिवर्तन की घातक परिणति तक ले जाएंगे और उसकी शुरुआत हो चुकी है।

गांधी पुराने नहीं पड़े हैं, हम उनके विचारों को व्यवहार में बदलने की क्षमता खो चुके हैं। हमारे पास ऐसे नेता नहीं हैं जो गांधी के विचारों को आज की दुनिया की जरूरतों के हिसाब से ढाल सकें। विचारों के माध्यम से उद्देश्य की ओर बढ़ने की क्षमता मेरी समझ में गांधी की सबसे महत्वपूर्ण खूबी रही है। ऐसा उन्होंने अहिंसा, न्याय और समानता के आदर्शों से समझौता किए बगैर किया। इस गांधी टेस्ट के अंत में वह एकमात्र विषय जहां हम जीरो से थोड़ा अधिक स्कोर करते हैं, वह है लोकतंत्र। मैं यह नहीं कह रही कि हमने उनके स्वावलम्बी गांव की अवधारणा को फलीभूत करने में सफलता पाई है। हम ऐसा करने में नाकाम रहे हैं। हमने प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतंत्र को मजबूती दी है जबकि गांधी का उद्देश्य शासन में जनता की भागीदारी सुनिश्चित करना था। पुराने फैशन के लेकिन लोकप्रिय तानाशाहों के तमाम हमलों और आज के जमाने में हमारी निजता पर लगातार हो रहे हमले के बावजूद लोकतंत्र किसी तरह जिंदा है। लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। अब जबकि गांधी का 150वां जन्मदिन अगले साल है, हमें रुककर उनके बारे में विचार करने की जरूरत है। केवल उनके बारे में ही नहीं, उनके तरीके पर भी।

सुनीता नारायण सेंटर फार साइंस एंड एन्वायरमेंट सीएसइ नयी दिल्ली की चेयर पर्सन हैं। यह आलेख सीएसइ की पत्रिका डाउन टू अर्थ से साभार यहां प्रस्तुत किया गया है।

सामता की वादियों में नाग-नेवले की भिड़ंत

प्रदीप कुमार

''तिनकों की मेरी झोपड़ी
कोई आसन कहां बिछाऊं?
कि तेरी याद की चिंगारी
मेहमान बनकर आयी है।''

और मेहमान बनकर आयी यादों की इस चिंगारी को जब मैंने बड़े जतन से अपने अंतस्तल के कुटीर में बिठाकर अपने मन को उसके आलोक से आलोकित प्रांगण में विचरने को छोड़ा तो वह बार-बार घूम फिर कर वहीं जा अटकता है। सारंडा के उस अनूठे, अद्वितीय वन्य प्रदेश में जिसे हम सामता वन क्षेत्र के नाम से जानते हैं। सामता का वह मनभावन, सुंदर, सुरम्य, रोमांचकारी एवं वैभवमय वन्य प्रदेश जहां अपने क्षेत्र प्रशिक्षण के दौरान जनवरी 1985 से जून 1985 तक का एक-एक पल मैंने प्रकृति के बहुआयामी स्पंदनों से स्पंदित होते हुए, उसकी वादियों में उसके वृक्षों, लताओं, गुल्मों, वीरूधों, नदियों, पहाड़ों और झरनों से सीधे बातें करते हुए, उनसे एक जीवंत तादात्म्य स्थापित करते हुए पूरी जीवतंता के साथ जीया है। वन्य प्रदेश और वह भी सारंडा का और वह भी सामता का - इनका दर्शन, इनका सानिध्य, इनसे तादात्म्य, इनसे एकाकार होना अपने आप में एक अद्भुत, अलौकिक अनुभूति एवं आध्यात्मिक संतुष्टि है।

कुल 363 वर्ग किलोमीटर के विस्तृत क्षेत्र में फैले सामता वन क्षेत्र का वन्य प्रदेश उस समय सारंडा वन प्रमंडल के तीन वन क्षेत्रों में सबसे विस्तृत, आकर्षक एवं बड़ा था। शेष दो अन्य वन क्षेत्र गुवा एवं कोयना क्रमशः 243 एवं 241 वर्ग का लगभग 43 प्रतिशत भाग सामता वन क्षेत्र के घाटियों में फैला हुआ है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से सारंडा वन प्रमंडल को अब चार वन क्षेत्रों में बांटा गया

है - सामत, गुवा, कोयना एवं ससंग्दा।

मुख्यतः साल के ऊंचे ऊंचे दरख्तों से सुशोभित एवं नाना प्रकार के अन्य वृक्षों, वनस्पतियों एवं रंगीले वन्य प्राणियों से अलंकृत एवं लकदक इस वन्य प्रदेश को स्वंय पर गौरवान्वित होने का पूरा अधिकार है। अपनी रंगमय छोटी बड़ी पहाड़ियों, बलखाती नदियों एवं गुनगुनाते झरनों पर यदि यह वन्य प्रदेश इतराता है, इठलाता है तो कोई गलत नहीं है। दूर सुदूर तक सघन वनों में फैली असीम नीरवता किसी भी दग्ध मन को शांत करने में सक्षम हैं। इन वन प्रांतरों में विचरना अपने आप को सीधे उस ब्रम्हा, उस परमपिता परमेश्वर से जोड़ने के समान है जिससे जुड़ने के लिए लोग न जाने कौन-कौन से तप व उपाय करते हैं। इन घने वनों में भ्रमण करते हुए, गुजरते हुए कई बार ऐसे अवसर आये हैं जब मैंने उस महान ईश्वर के अलौकिक दिव्य स्वरूप को आदि काल से अपने स्थान पर खड़े ऋषि मुनि तुल्य समाधिस्थ विशाल साल के वृक्षों में महसूस किया है। ऐसी स्थिति में मैं अपने साथ के अधिकारियों, वन कर्मियों को दूर हो जाने का अनुरोध करता रहा हूं ताकि वन प्रांत के उस एकांत में उस अद्वितीय, अलौकिक एवं अद्भुत अनुभूति का पूरा आनंद ले सकूं। सतचित्त, आनंद को एकाकार होते मैंने इन्हीं सघन वनों में अनुभव किया है।

अभी पौ फटने में देर थी। अधखुली आंखों से घड़ी देखा तो प्रातः के 03:30 बज रहे थे। एक बार जब नींद खुल ही गयी तो सोचा अब पुनः सोना क्या क्योंकि तीन घंटों बाद तो पांडेय जी फौरेस्टर एवं अन्य वनकर्मियों के साथ वन के भ्रमण एवं निरीक्षण के लिए प्रस्थान ही करना है। सारंडा के वनों और वह भी सामता के वनों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था, इसलिए एक कौतुहल, एक उत्सुकता भीतर ही भीतर मन को गुदगुदाये जा रही थी। दरअसल 30 जनवरी 1985 को सामता वन क्षेत्र के प्रभार लेने के बाद आज दिनांक 12 फरवरी 1985 को इन वनों में जाने का यह मेरा पहला कार्यक्रम था। कुछ ही घंटों बाद होने वाले वन भ्रमण के बारे में सोचते, सोचते अचानक नजर खिड़की से बाहर गयी। रात का धुंधलका अब छटने लगा था। ऐसा प्रतीत हुआ कि प्रभात की बेला ने निशा के दरवाजे पर अपनी पहली दस्तक दी हो। पौ अब सचमुच फटने लगी थी। कुछ क्षणों पश्चात् ही पूरब का क्षितिज पूर्ण आभामय होकर बालारूण के बाल किरणों के नव अभिनंदन के लिए तैयार था। यह क्या ? अब तो आलोक रेखा भी फैल चली। बादलों के एक दो हल्के टुकड़ों के बीच से हंसता मुस्कुराता बालारूण प्राची की शय्या से अंगड़ाई लेता अब उठ खड़ा हुआ। उसकी बाल सुलभ कोमल किरणें पूरे वातावरण को आलोकमय कर गयीं। निशा अपने तम के साथ विदा ले चुकी थी। कुछ भी तो स्थायी नहीं है यहां, फिर यह अंधेरा कब तक अपने बाहुपाश में इस जगत को बांधे रखता। इस उगते सूर्य की स्वर्ण रश्मियां प्रकाशमान कर गयी थीं पूरे वातायन को। तभी दूर से फौरेस्टर श्री अनंत लाल पांडेय मेरे अवास तरफ आते दिखे। अब वे मेरे पास थे। ''सर, कब चलना है जंगल ?'' पांडेय जी ने मझसे पूछा। 'बस तैयार होकर थोड़ी देर में निकल चलते हैं'। मैने प्रत्युत्तर दिया।

ठीक 07:00 बजे प्रातः राजकीय व्यपार के एक ट्रक पर सवार होकर हम सब ने जराईकेला से सामता के वनों के लिए प्रस्थान किया। जराईकेला सामता वन क्षेत्र का मुख्यालय है जो बिहार एवं उड़ीसा की सीमा पर स्थित है। यह अत्यंत ही छोटा कसबा है जहां की आबादी नाम मात्र की है यत्र-तत्र कुछ आरा मशीने हैं जिनकी गड़गड़ाहटें यहां की शांति को भंग करती हैं। यहीं पर बिहार राज्य का सबसे बड़ा लकड़ी डिपो है। एक छोटा स्टेट बैंक भी है, एक मिडिल स्कूल भी है। यहां से थोड़ी ही दूर पर सामता का घना वन क्षेत्र शुरू हो जाता है।

राजकीय व्यापार के ट्रक से रेड़ा गांव तक आकर हमलोगों ने उसे छोड़ दिया। विचार हुआ पैदल ही जंगल की पगडंडियों से होते हुए आगे बढ़ा जाए यहां से हमने घने जंगल की पगडंडी पकड़ ली। आगे आगे वनरक्षी प्रकाश, उसके पीछी मैं, मेरे पीछे फौरेस्टर पांडेय जी एवं उनके पीछे दो और वनरक्षी। कुल पांच व्यक्तियों का यह काफिला सामता के बियावानों में सामता नाला के किनारे-किनारे चल पड़ा। साल के ऊंचे-ऊंचे, मोटे-मोटे दरख्तों के बीच से गुजरना मुझे अत्यंत रोमाचकारी लग रहा था। वनों की सघनता इतनी अधिक कि सूर्य किरणों को भी धरती तक पहुंचने में काफी मशक्कत करनी पड़ रही थी। साल के अलावे बीजा साल, हर्रे, बहेरा, तून सेमल, जामुन एवं आम के विशाल वृक्ष जंगल को एक अतिरिक्त सुषमा व समृद्धि प्रदान करते प्रतीत होते। छोटे-छोटे पेड़ पौधे, नाना प्रकार के रंगों के फूलों से लदी झाड़ियां, चिड़ियों की मधुर चहचहाहट एवं पगडंडी के साथ-साथ कल-कल स्वर से बहता सामता नाला- सब मिलकर हमारी इस यात्रा को अत्यंत सुखकर एवं आनंददायक बना रहे थे।

जंगलों में ऊंची-नीची पहाड़ी रास्तों, पगडंडियों पर चलने का अपना मजा है। तिस पर सामता जैसे घने वनों की पगडंडियों पर चलना अत्यंत ही रोमाचकारी अनुभव है। हर पल आपको सतर्क एवं चौकन्ना रहना है। घनी झाड़ियों के बीच से न जाने कब कोई जंगली जानवर निकल आये या कंटीली झाड़ियां कब आपके कपड़ों को अपना शिकार बना लें या फिर आपका अगला असावधान कदम आपको ही न गिराकर घायल कर दे। वनों में विचरण का अपना नियम है और इनमें यह भी शामिल है कि आप कम से कम बोलें, हाथ के इशारों से ही ज्यादा काम चलाये।

चलते-चलते एक अत्यंत ही ऊंचे एवं विशाल साल वृक्ष के शिखर को मैं रुक कर देख रहा था। कितनी ऊंची थी उसकी

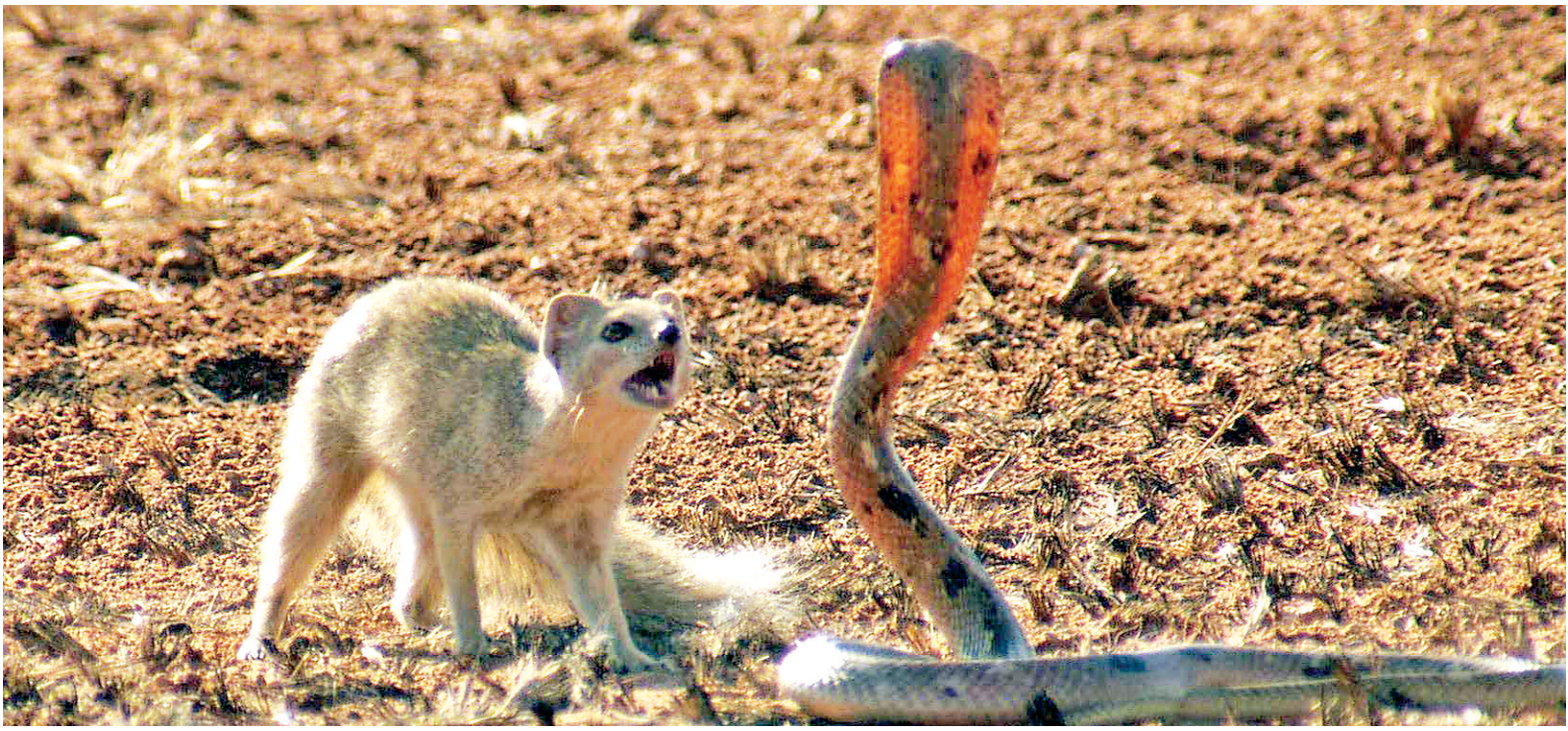

चोटी। एक झटके में तो मैं उसके सर्वोच्च शिखर को नहीं ही देख सका। फिर यत्न कर पूरी गर्दन झुकायी तो उसका शीर्ष देख पाया। मेरे विचार से यह 120 फीट से कम ऊंचा पेड़ नहीं होगा। और उसका घेरा- ओह ! यह तो वृक्ष ऊंचाई पर 23 फीट है। सारंडा में ऐसे-ऐसे साल वृक्षों का सानिध्य एवं दर्शन मैं देव दर्शन से कम नहीं मानता। इस विशाल वृक्ष की बलिष्ठ जड़ें एवं उनकी हरी हरी छोटी शाखायें उसे विचित्र स्वरूप प्रदान कर रही थीं। अभी मैं इस विशाल साल वृक्ष से साक्षात्कार कर ही रहा था कि अचानक फौरेस्टर पांडेय जी ने धीरे से कहा- ''उधर नीचे देखिए सर।'' इतना कहकर पांडेय जी ने उंगली से नीचे करीब 100 फीट स्थित एक चट्टान की ओर इशारा किया जिससे कटकर सामता नाला कलकल बह रहा था। मेरी नजरें दूर घाटी में गयीं। 'क्या है पांडेय जी ?' मैने धीरे से उसे पूछा। 'सर, देखिये न उस उतने बड़े संप को।' पांडेय जी ने प्रत्युत्तर दिया। फिर मैंने उधर देखा। 'बाप रे ! कितना बड़ा विशाल विषधर ! ' मेरे मुंह से अचानक निकला। फौरेस्टर बाब पांडेय जी की उम्र तब करीब 45 वर्ष की रही होगी। उनकी अनुभवी आंखों एवं कानों ने नीचे घाटी में हो रहे इस प्रकार के हलचल को तत्काल ताड़ लिया। ऐसे में मुझे अपने प्रशिक्षण अकादमी के निदेशक पंत साहब की बातें याद आयीं। वे हम प्रशिक्षुकों को हमेशा कहा करते थे कि एक वन अधिकारी के आंख, कान एवं नाक अत्यंत सजग एवं चौकन्ने होने चाहिए, ताकि वनों में भ्रमण करते समय उसके हर स्पंदन, हर हलचल, हर धड़कन को वह तुरंत ताड़ ले एवं तदनुरूप कार्रवाई करे। बात भी सही है क्योंकि यदि आप सतर्क न रहे तो जरा सी चूक के कारण जंगल में जान के लाले पड़ सकते हैं। वह सांप क्या था प्रकृति की कलाकारी का अद्भुत नमूना था। करीब डेढ़-दो मीटर लंबा वह विषधर डरावना भी था तो खूबसूरत भी था। उसके लंबे शरीर पर काले एवं पीले रंग की पट्टियां (बैण्ड) क्रमशः एक के बाद एक थीं जो आकर्षक बना रही थीं। फौरेस्टर बाबू एवं अन्य वनरक्षियों ने कहा- 'सर, यह चूड़ी सांप है जो अत्यंत विषैला होता है'। मैं इतनी दूरी से उसे देख रहा था कि ठीक-ठीक कहना मुश्किल है कि वह कौन सी प्रजाति का सर्प था। पर इतना अवश्य है कि वह भयानक एवं खूबसूरत ।

सामता नाले को इससे कोई मतलब नहीं था कि उसके किनारे के एक चट्टान पर पसरा कोई विषधर फूं-फूं कर रहा है। वह तो कलकल ध्वनि से सदा चलते रहले का संदेश देते हुए बहा जा रहा था। वह सांप कुछ अशांत सा था क्योंकि उसके हाव भाव उसकी बेचैनी को परिभाषित कर रहे थे। अनुभवी फौरेस्टर बाबू ने कहा- 'सर, लगता है इसका कोई शत्रु इसके आसपास है तभी वह इतना फूं फां कर रहा है'। अभी हमसब कुद अनुमान लगाते कि वनरक्षी प्रकाश ने कहा - ''देखिए सर, वह क्या है'' ? चट्टान की ओट में छिपे उस जीव को पहचानने में हमारे फौरेस्टर बाबू ने

कोई गलती नहीं की। ''वह तो नेवला है सर।'' एक ही सांस में फौरेस्टर बाबू बोल गये। ''अब इनका भिड़ंत देखा जाये।'' फौरेस्टर बाबू ने पुनः कहा। मात्र किसी किताब में पढ़ा था सांप और नेवले की दुश्मनी एवं उनके युद्ध के संबंध में। प्राकृति के इस अनोखे रंगमंच पर उसी रोमांचकारी नाटक का मंचन देखेंगे यह सोचकर ही हम रोमांचित हो उठे। 100 फीट की ऊंची सुरक्षित जगह भी हम सब को आत्मविश्वास से भर गयी और पूरी निश्चिंतता के साथ उन दोनों योद्धाओं के दावं-पैतरों और भिड़ंत को देखने लगे।

फूं-फां, फू-फां उसके फुफकारने की आवाज अब स्पष्ट थी। लगता था वह विशाल सर्प अपने को वार्म अप कर रहा था। कभी इधर तो कभी उधर किंतु अत्यंत व्यग्र व बेचैन। उधर नन्हे, से नेवले महाराज भी वर्म आप हो रहे थे और यदा कदा अपनी सिसकारी से तातावरण को युद्धमय बना रहे थे। वे भी कभी इधर तो कभी उधर हो रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे दोनों योद्धा अपने अपने दावं लगाने की फिराक में पैंतरेबाजी कर रहे थे। मुझे लगा नन्हा स नेवला भला कैसे इतने बड़े विषधर का मुकाबला कर पायेगा? इधर से उधर पैंतरेबाजी हो रही थी किंतु किसी की हिम्मत न हो रही थी कि वह वार करे। अब तो दोनों बिल्कुल आमने सामने थे। दोनों सही अवसर की तलाश में। अरे यह क्या? विषधर ने तो लगभग अपना एक तिहाई शरीर उठा लिया और पूरे जोर की ताकत से नेवले पर झपट्टा मारा। फूर्तीला नेवला पूरा सतर्क था। भुजंग का वार खाली गया। खाली गये इस वार से वह और भन्ना गया। उसकी फुंफकार और तेज एवं डरावनी हो गयी। तेजी से अपने शरीर को सामान्य कर फिर उसने दूसरा आक्रमण साधा। इस बार लगा उसे आंशिक सफलता भी मिली। नेवले के शरीर का पिछला हिस्सा लगा उसकी गिरफ्त में आ गया था। किंतु यह क्या लगता है सांप ने फिर कुछ गलती की और नेवला तीव्र गति से उसके शिकंजे से छूट कर ऊपर आ गया। सांप के दो दो आक्रमण से नेवला विचलित हो गया। गुस्से से उसकी भी सिसकारियां तेज होती लगीं। यह घातक था कि वह भी अब आक्रमण के लिए तैयार है। और तभी बिजली की तेजी से कूदकर नेवले ने उस विषधर के मध्य भाग को पकड़ने का प्रयास किया। सांप भी कम न था इससे पहले की नेवला अपने मजबूत जबड़े एवं अत्यंत पैने दांतों से उसके शरीर को चबाता अपने विचित्र दावं से उसने अपने को नेवले से मुक्त करा लिया।

सामता के वनों के इस रणभूमि में अब रणचंडी का आवाहन हो चुका था। दोनों रणबाकुंरेअब मरने-मारने पर उतारू थे। दावं पर दावं, पैतरें पर पैतरें लग रहे थे। कभी वह साक्षात् काल स्वरूप भुजंग भारी पड़ता तो कभी वह तेज फूर्तीला नेवला। अपनी अपनी सासें रोके हम भी प्रकृति के इस अविस्मरणीय एवं अनोखे ड्रामे का क्लाइमेक्स का देख रहे थे। रोमांच इतना कि हम स्वयं सिहर सिहर जाते । अब स्थिति यह थी कि कौन किस पर और कितना भारी पड़ रहा है कहना मुश्किल था। सांप अपने एक तिहाई से भी ज्यादा शरीर को खड़ा कर फुफकारता। हर फुफकार के साथ वह अपनी लपलपाती दो भागों में कटी जीभ को बाहर निकालता तो और भी भयानक लगता। उधर नेवला अपने दो पैरों पर खड़ा हो पूरी ताकत से उससे भिड़ने को तैयार। दोनों भरपूर क्रोध में तरह-तरह की अवाजें निकालते हुए। बड़ा अद्भुत एवं रोमांचक दृश्य था वह। तभी एक उछाल के साथ नेवला विषधर के शरीर से लिपट गया। दोनों एक दूसरे को पटखनी देने के लिए बेचैन। गुत्थी का यह खेल करीब दो चार मिनट चला होगा कि फिर दोनों छिटक कर अलग हो गये। दोनों अस्त व्यस्त, लहुलूहान। विजय श्री किसके गले जयमाला डालेगी कहना मुश्किल।

सांप और नेवले का रोमाचकारी युद्ध मैंने कभी नहीं देखा था। प्रकृति अपने जीवों में कैसा कैसा खेल खेलती है सोचकर मैं स्तब्ध था। जिस प्रकार दो प्रतिद्वंद्वी पहलवान अखाड़े में हर दावं के बाद शरीर पर मिट्टी लगा कर फिर तैयार हो जाते हैं। उसी प्रकार रक्त से लथपथ ये दोनों योद्धा भी पुनः अपने अगले दावं की तैयारी में थे। अभी हम कुछ सोचते कि उसके पहले ही नन्हे नेवले ने बिजली की तेजी से सांप के मुंह पर झपट्टा मारा। सांप का पूरा मुंह नेवले के खतरनाक जबड़े में आ चुका था। अब सांप का बचना असंभव। दोनों गुत्थम गुत्थी में अस्त पस्त। करवट पर करवट बदले जा रहे थे। रक्त की धारा फूट चली थी। संपूर्ण चट्टान दोनों के रक्त से रक्तिम हुआ जा रहा था। सांप के लाखों प्रयास बेकार जा रहे थे। नेवले का यह वार बिल्कुल सही पड़ा था। किसी भी कीमत पर अब वह अपने इस जानी दुश्मन विषधर को छोड़ने को तैयार नहीं था। लिपटा लिपटी, गुत्थम गुत्थी का यह आखिरी दौर अधिक देर न चला। अपने तीखे पैने दातों एवं मजबूत जबड़े से नेवले ने उस भयानक सांप के मुंह को कच-कच कर चबा डाला। साक्षात काल प्रतीत होने वाला वह सर्प स्वयं काल का ग्रास बन चुका था। सांप का शरीर अब ढीला पड़ चुका था। एक झटके के साथ उस सर्प की मृत काया को अपने अबड़े में दबाये वह नन्हा नेवाला सामता नाला के किनारे की झाड़ियों में न जाने कहा गुम हो गया। हम हतप्रभ, और रोमांचित। सच, प्रकृति के इस अनोखे रंगालय में न जाने कितने रोमांचकारी नाटकों का मंचन नित्य प्रति होता होगा यह सोचकर ही मैं विस्मित था।

सूर्य की किरणें अब प्रखर हो चुकी थीं और प्रातः के बालारूण यौवन की दहलीज पर कदम रखते हुए एक देदीप्यमान भास्कर बन चुके थे। सांप एवं नेवले के इस विस्मयकारी युद्ध से रोमांचित हम सामता के बियावानों में अपने गंतव्य की ओर बढ़ गये।

1967–'72 बैच के छात्र प्रदीप कुमार पूर्व प्रधान वन संरक्षक झारखंड रह चुके हैं। इस समय वे भारतीय राजमार्ग प्राधिकार के झारखंड स्थित सलाहकार हैं।

सामता के वनों के इस रणभूमि में अब रणचंडी का आवाहन हो चुका था। दोनों रणबाकुंरेअब मरने-मारने पर उतारू थे। दावं पर दावं, पैतरें पर पैतरें लग रहे थे। कभी वह साक्षात् काल स्वरूप भुजंग भारी पड़ता तो कभी वह तेज फूर्तीला नेवला। अपनी अपनी सासें रोके हम भी प्रकृति के इस अविस्मरणीय एवं अनोखे ड्रामे का क्लाइमेक्स का देख रहे थे।

आत्म-निवेदन

- रचयिता- महेश नारायण सक्सेना

रागिनी हूं मैं तुम्हारे कंठ की,
गूंजती झंकार बन जो विश्व में,
कल्पना हूं मैं तुम्हारे स्वप्न की,
हो रही साकार सारी सृष्टि में।

भोर की लाली तुम्हारी मैं बनूं
रात के गहरे तिमिर की चेतना;
सूर्य की हूं चिलचिलाती धूप तो,
चांद की मैं चमचमाती ज्योत्सना।।

सुप्त हो आलोक के आगार तुम,
मैं तुम्हें साकार करती दीप में;
तुम बनो दीपक तुम्हारी लौ बनूं,
ताप भरती मैं तुम्हारी ज्योति में।

तुम हृदय तो मैं तुम्हारी भावना,
वेदना तुम मैं तुम्हारी हूक हूं;
तुम बनो ऋतुराज तो मैं कोकिला,
कोकिला तुम मैं तुम्हारी कूक हूं।।

खोजती फिरती बयार बसंत की,
प्यार प्रिय का प्रकृति के श्रृंगार में,
मुखर होते ये मदिर स्वर कौन से,
प्रणय पीड़ित भ्रमर के गुंजार में।

साजकर अभिसार आज वसुंधरा,
हार अबंर के गले में डालती,
भाव के वह टिमटिमाते दीप लो,
मौन प्रियतम की उतारे आरती।।

CENTER FOR EXCELLENCE IN NEONATAL & PEDIATRIC CARE.
CENTER FOR EXCELLENCE IN NEONATAL & PEDIATRIC SURGERY
CENTER FOR EXCELLENCE IN OBS & GYNAE

Facilities Available

- One of the Largest and most advanced Multi speciality Hospital dedicated for Mother & Children
- 200 Bedded Hospital, 50 Neonatal ICU Beds, 30 Pediatric ICU Beds.
- Dedicated OBS & GYNAE unit
- Single Deluxe Rooms (AC & Non Ac)
- High Dependency Unit (Neonatal & Pediatric)
- 22 Ventilators (High Frequency) & Nitric Oxide Delivery System.
- Dedicated Operation Theater for Neonatal & Pediatric Surgery
- Dedicated Pediatric Endoscopy & Bronchoscopy and EEG unit.
- Fully automated lab, Digital X-ray, Color Doppler, ECHO & CT Scan.
- 24x7, Lab, Pharmacy & Ambulance Facility.

Rani Hospital

(Managed by Dukhharan Memorial Charitable Trust)

In Front of Governor House, Behind Machali Ghar, Booty Road, Ranchi, Jharkhand.

Phone No: 0651-2360411/30/35, Helpline: 07677111010

Visit us at-www.ranihospital.com, Contact us at: info @ranihospital.com

Netarhaat
jharkhand
tourism
Nature's hidden jewel